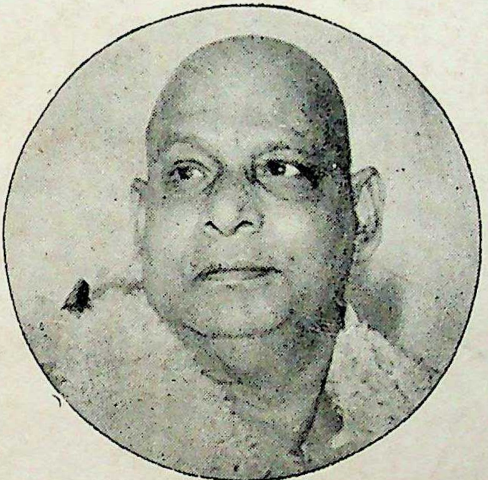
जप-योग

(भारत के ऋषियों के पवित्र मन्त्र-शास्त्र की व्यावहारिक शिक्षा)

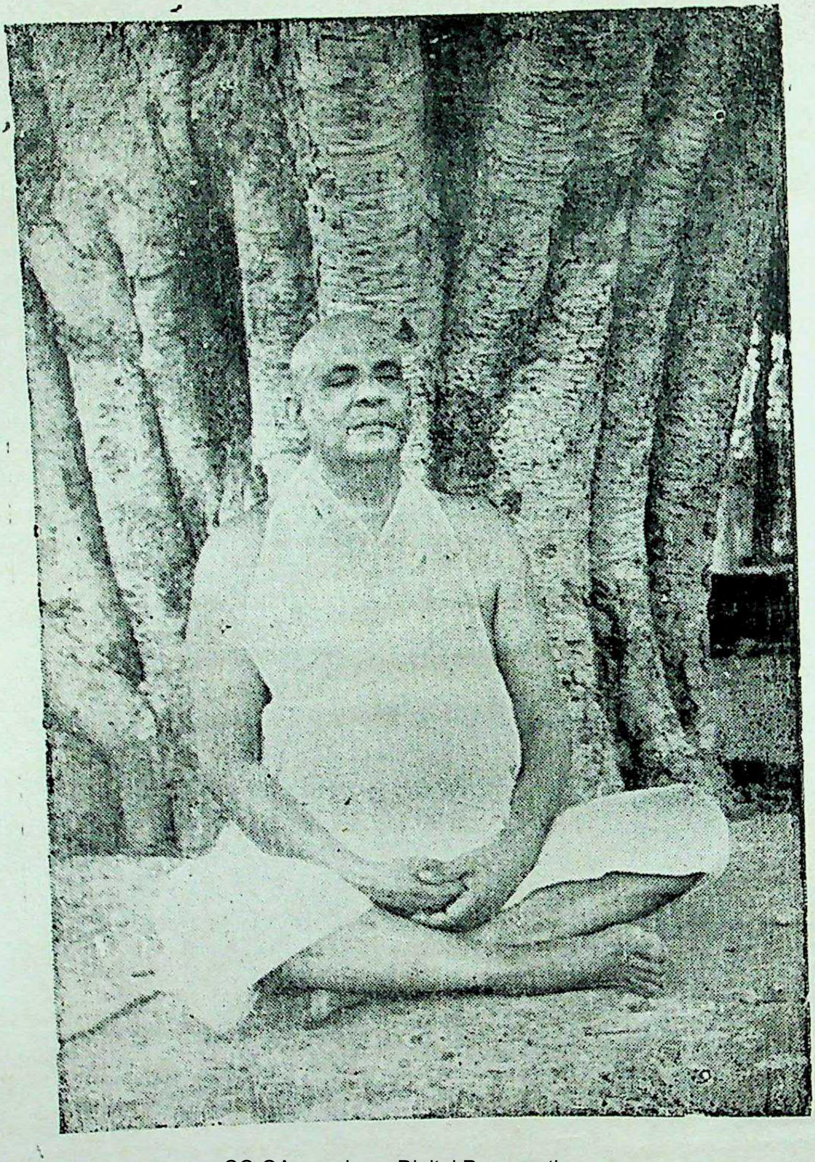


स्वामी शिवानन्द

ॐ

श्री स्वामी शिवानन्द शताब्दी प्रकाशन-माला--तृतीय पुष्प

जपयोग



परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द सरस्वती

जपयोग

(भारत के ऋषियों के पवित्र मन्त्र-शास्त्र की
व्यावहारिक शिक्षा)

: लेखक :

स्वामी शिवानन्द

: हिन्दी-भाषान्तरकार :

सुश्री कान्ती कपूर, एम्० ए०, एल्० टी०

: प्रकाशक :

दिव्य जीवन सङ्घ,

पत्रालय—शिवानन्दनगर--२४९ १९२,
जिला---टिहरी-गढ़वाल (हिमालय), उ० प्र०, भारत

१९८२

मूल्य] [रु० ८-००

'डिवाइन लाइफ सोसायटी' के लिए श्री स्वामी कृष्णानन्दजी द्वारा प्रकाशित तथा श्री गोपालसिंह जी द्वारा 'लक्ष्मी प्रेस' लक्ष्मणभूला मार्ग, मुनि-की-रेती, जिला टिहरी-गढ़वाल (उ.प्र.), पो० ऋषिकेश—२४९ २०१ में मुद्रित।

प्रथम हिन्दी संस्करण—१९५५
द्वितीय हिन्दी संस्करण—१९५८
तृतीय हिन्दी संस्करण—१९७८
चतुर्थ हिन्दी संस्करण—१९८२
(३००० प्रतियाँ)

—: प्राप्ति-स्थान :—

शिवानन्द प्रकाशन संस्थान,

दिव्य जीवन सङ्घ,

पत्रालय—शिवानन्दनगर-२४९ १९२,
जिला टिहरी-गढ़वाल (हिमालय), उ० प्र०, भारत।

भूमिका

इस कलिकाल में भगवत्प्राप्ति का केवल जप ही एक सरल उपाय है। गीता के व्याख्याकार और अद्वैतसिद्धि नामक ग्रन्थ के प्रख्यात प्रणेता स्वामी मधुसूदन सरस्वती को श्रीकृष्ण-मन्त्र के जप से ही भगवान् श्रीकृष्ण के साक्षात् दर्शन हुए थे। पञ्चदशी नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ के प्रणेता स्वामी विद्यारण्य को जप द्वारा ही माता गायत्री के प्रत्यक्ष दर्शन हुए थे; पर आज-कल सभी शिक्षित लोगों और कालेजों के विद्यार्थियों का विश्वास मन्त्रों पर से विज्ञान के प्रभाव से उठ गया है। जप करना उन लोगों ने बिलकुल छोड़ दिया है। यह सचमुच बड़े ही खेद की बात है। जब तक खून में गरमी रहती है तब तक अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग जिद्दी, अभिमानी और नास्तिक रहते हैं। उनके मन और मस्तिष्क का एक बार पूरी तरह कायाकल्प कराने की आवश्यकता है। जीवन अल्प है। समय भागा जा रहा है। संसार यातनाओं से पूर्ण है। अविद्या की गाँठें काट कर निर्वाण-सुख का आनन्द लो। तुम्हारा जो दिन बिना जप किये बीतता है उसे तुम व्यर्थ गया समझो। जो इस संसार में केवल खाने, पीने और सोने में ही समय खोते हैं और जो बिलकुल जप नहीं करते, वे दो पैर वाले पशु हैं।

अमरीका में गगनचुम्बी मकान हैं। हर एक कमरा नवीनतम है और विद्युत् तथा वायु-सम्बन्धी साधनों से सजा है; पर अब प्रिय मित्र, मुझे सच-सच बतलाओ कि दोनों में कौन बड़ा है? वह जो अमरीका के गगनचुम्बी मकान में रहता है, जिसके पास सैकड़ों मोटरें और हवाई जहाज, अटूट धन है; परन्तु बड़ी चिन्ताएँ, सोच-विचार, तरह-तरह की सैकड़ों बीमारियाँ तथा रक्त-चाप आदि से ग्रस्त है और जिसका हृदय घोर अज्ञान, काम, क्रोध, लोभ आदि से भरा है या वह जो ऋषिकेश में गङ्गा-तट पर फूस की कुटिया में रहता है, जिसका स्वास्थ्य अति-सुन्दर है, हृदय विशाल है, जो सेवा में ही आनन्द लेता है, जिसे अनन्त सुख और शान्ति है, जिसे पूर्ण आत्मज्ञान है; किन्तु जिसके पास धन, चिन्ताएँ, सोच-विचार कुछ भी नहीं हैं?

आध्यात्मिक जीवन ही सच्चा जीवन है। अध्यात्म-ज्ञान ही सच्चा अटूट धन है। इसीलिए जाग जाओ और अध्यात्म-ज्ञान को प्राप्त करने के लिए उत्कण्ठित हो जाओ, साधना का अभ्यास करो। आत्मा को पहचानो और इसी जन्म में सच्चे योगी बन जाओ।

इस दृश्य जगत् से इन्द्रियों को हटा लेने और मन को भीतर एकाग्र करने का ही नाम योग है। आत्मा में निरन्तर मग्न रहते हुए जीवन बिताना ही असली योग है। योगाभ्यास मनुष्य को देवता बना देता है। योग निराश हुए लोगों को आशा, दुःखियों को सुख, निर्बलों को बल और अज्ञानियों को ज्ञान देता है। परमानन्द-रूपी अन्तर्जगत् और चिरशान्ति के साम्राज्य में जाने की कुञ्जी योगाभ्यास ही है।

तुम्हारी आध्यात्मिक उन्नति बहिर्परिस्थितियों और वातावरण, कष्टों और कठिनाइयों, विपरीत प्रभावों आदि पर विजय पाने पर ही निर्भर है। जीवन में सर्वदा अच्छी-बुरी परिस्थितियों में योगी को अपना मन एक-सा और समान भाव में रखना पड़ता है। वह वज्र-समान कठोर हो जाता है; क्योंकि वह अपरिवर्त्तनशील तथा अमर आनन्द-रूपी आत्मा की कड़ी चट्टान की नींव पर खड़ा है। इसलिए योगी को धीर कहते हैं। भगवान् श्रीकृष्ण गीता के अध्याय ११ श्लोक १५ में कहते हैं, "वह मनुष्य जिसे सुख और दुःख विचलित नहीं करते, जो खेद और आनन्द में समानचित्त रहता है और जो धीर है वही अमर पद पाने का अधिकारी है।"

संसार का जीवन अस्थिर तथा क्षणिक है। संसारी जीवन कष्टों, अस्थिरता, यातनाओं आदि से पूरित है। समाज में उच्च स्थान प्राप्त, वड़ा धनी और वहुत बुद्धिमान् कहलाने वाला सांसारिक मनुष्य भी आध्यात्मिक जगत् में दिवालिया है। आध्यात्मिक धन ही सच्चा अकूट धन है, अध्यात्म-ज्ञान ही सच्चा ज्ञान है, आध्यात्मिक जीवन ही सच्चा जीवन है। पूर्ण योगी ही संसार का सच्चा चक्रवर्ती सम्राट् है।

जिस तरह शिकारी जाल फैला कर और सुन्दर बाजा वजा कर हिरन फँसाता है, उसी तरह योगी भी दाहिने कान में होने वाले अनाहत नाद में मन लगा कर मन को फँसाते हैं। कान में निरन्तर होने वाले नाद की मोहक तानें मन को आरम्भ में आकर्षित करती हैं। इस तरह नाद सुनते-सुनते मन को बाँध कर नष्ट कर दिया जाता है। मन नाद में घुल कर लीन हो

जाता है। मन को बाँधने का अर्थ है चञ्चल मन को नितान्त स्थिर कर देना। मन मारने का अर्थ है मन को नाद में लीन कर देना। ऐसा होने के बाद मन विषयों के पीछे नहीं भाग सकता।

इस चञ्चल, नटखट और अस्थिर मन को मारने के लिए बुद्धिमान्, चतुर और निरन्तर सावधान योगी धनुष-बाण साधे सदा तैयार रहता है। योगी नैतिक पूर्णता प्राप्त करता है; इन्द्रियों और मन को वश में करता है; प्राणवायु पर नियन्त्रण करता है और अन्त में मन मार कर गम्भीर असम्प्रज्ञात समाधि में प्रवेश कर जाता है। यम, नियम, आसन और प्राणायाम के अभ्यास में कुछ सफलता प्राप्त होने के बाद साधक को प्रत्याहार का अभ्यास करना चाहिए। इन्द्रियों को विषयों से खींच लेने का नाम प्रत्याहार है। इस तरह के अभ्यास से इन्द्रियाँ नियन्त्रण में आ जाती हैं। इस अभ्यास के पक्के हो जाने के उपरान्त ही साधक का सच्चा आन्तरिक जीवन आरम्भ होता है। प्रत्याहार के विना अच्छी तरह साधना किये जो साधक सहसा उछल कर ध्यान का अभ्यास करने जाता है वह मूर्ख है। उसे ध्यान के अभ्यास में कभी सफलता नहीं मिलेगी। इन्द्रियों की बहिर्मुखी प्रवृत्ति को प्रत्याहार रोकता है। चञ्चल इन्द्रियों की राह में प्रत्याहार एक तरह का विघ्न है। प्राणायाम के उपरान्त प्रत्याहार स्वयं आने लगता है। जब प्राणायाम के अभ्यास से प्राणवायु पर अधिकार होने लगता है, तब इन्द्रियाँ स्वयमेव शिथिल हो जाती हैं। एक तरह वे भूख से मरने लगती हैं और निरन्तर क्षीण होती जाती हैं। अब इन्द्रियाँ अपने विषयों का संयोग पा कर फुफकार भी नहीं पातीं। प्रत्याहार बड़ी कड़ी कवायद है। आरम्भ में तो इससे बड़ा कष्ट मिलता है; किन्तु आगे चल कर इसके अभ्यास में बड़ा

आनन्द आता है। इसके अभ्यास में बड़े धैर्य और अध्यवसाय की आवश्यकता है। इसके अभ्यास से अपार बल मिलता है। साधक की इच्छा-शक्ति बड़ी प्रबल हो उठती है। जिस योगी का प्रत्याहार में अच्छा अभ्यास हो जाता है, वह समर-क्षेत्र में भी शान्तिपूर्वक ध्यान कर सकता है।

जब सङ्कल्प-विकल्प नष्ट हो जाते हैं, तब मन अपने उद्गम या आधारभूत आत्मा में उसी तरह लीन हो जाता है, जिस तरह आधारभूत ईंधन के जल जाने पर अग्नि। ऐसी ही अवस्था में कैवल्य या पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त होती है। अभ्यास की किसी भी मञ्जिल पर कभी निराश मत होओ। निरन्तर अभ्यास से तुम्हें आध्यात्मिक शक्ति अवश्य प्राप्त होगी। यह निश्चित है। योगियों का आशीर्वाद तुम्हारी सहायता करे!

मन्त्रयोग के महत्त्वपूर्ण विषय पर और जप द्वारा पूर्णता प्राप्त करने के साधन पर इस पुस्तक द्वारा अच्छा प्रकाश पड़ेगा। पुस्तक के प्रथम अध्याय में जप की परिभाषा दी गयी है। द्वितीय अध्याय में भगवन्नाम की महिमा और महत्त्व बतलाया गया है। तृतीय अध्याय में भिन्न-भिन्न प्रकार के मन्त्र दिये गये हैं। चतुर्थ अध्याय में साधना-विषयक अपने व्यावहारिक तथा उपयोगी उपदेशों का समावेश है। अन्तिम अर्थात् पञ्चम अध्याय में उन महात्माओं के संक्षिप्त चरित्र दिये गये हैं, जिन्हें जप द्वारा भगवत्प्राप्ति हुई है।

भगवान् हमें ऐसी अन्तर्शक्ति दे, जिससे मन और इन्द्रियों को वश में करके हम निर्विघ्न जपयोग का साधन करें! जप-योग की चमत्कारिक शक्ति और उसके आश्चर्यकारक फलों पर हमारा विश्वास हो! ईश्वर के नाम की अपार महिमा को

समझने की शक्ति हममें हो ! देश के एक छोर से दूसरे छोर तक भगवान् के नाम का माहात्म्य हम विस्तार करें ! हरि-नाम की जय हो ! भगवान् शिव, विष्णु, राम, कृष्ण आप लोगों पर कृपा करें !

—स्वामी शिवानन्द

सूर्य-नमस्कार

ॐ सूर्यं सुन्दरलोकनाथममृतं वेदान्तसारं शिवं,
ज्ञानं ब्रह्ममयं सुरेशममलं लोकैकचित्तं स्वयम्।
इन्द्रादित्यनराधिपं सुरगुरुं त्रैलोक्यचूड़ामणिं,
ब्रह्माविष्णुशिवस्वरूपहृदयं वन्दे सदा भास्करम्॥

"मैं सदा भगवान् सूर्य को साष्टाङ्ग नमस्कार करता हूँ। सूर्य नारायण संसार के स्वामी हैं, अमर हैं, वेदान्त के सूक्ष्म सार हैं, सदा पवित्र पूर्ण ज्ञानस्वरूप हैं, पूर्ण ब्रह्म हैं, देवों के भी देव हैं, सदा शुद्ध-संसार के सच्चे आत्मरूप, इन्द्र, मनुष्यों और देवताओं के ईश्वर, देवताओं के गुरु, त्रिलोकी के सर्वश्रेष्ठ मणिरूप, विष्णु, ब्रह्मा और शिव के हृदय-रूप और प्रकाश को देने वाले हैं।"

ईशावास्योपनिषद् में लिखित श्लोक १५ और १६ वाली स्तुति पढ़ो। वह इस प्रकार है:

ॐ हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये।

पूषन्नेकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य व्यूह रश्मीन् समूह।
तेजो यत्ते रूपं कल्याणतमं तत्ते पश्यामि योऽसावसौ पुरुषः
सोऽहमस्मि॥

"सत्य का मुख एक सुवर्ण पात्र से ढका है। हे सूर्य ! अथवा हे भगवान् आप उस ढक्कन को हटा दें जिससे मुझे सत्य का दर्शन हो जाय। हे पूषन् ! (सबका पालन करने वाले) आप पूर्ण अन्तरिक्ष की परिक्रमा करते हैं, आप ही यम हैं, आप प्रजापति हैं। आप अपनी किरणों को समेट कर प्रकाश को एक स्थान पर एकत्र कीजिए, मैं आपके महा-महिमान्वित आकार का दर्शन करता हूँ। जो पुरुष आपमें है, वही मुझ में भी है।"

ॐ मित्राय नमः

ॐ रवये नमः

ॐ सूर्याय नमः

ॐ भानवे नमः

ॐ खगाय नमः

ॐ पूष्णे नमः

ॐ हिरण्यगर्भाय नमः

ॐ मरीचये नमः

ॐ आदित्याय नमः

ॐ सवित्रे नमः

ॐ अर्काय नमः

ॐ भास्कराय नमः

यजुर्वेद के शब्दों में "हे सूर्य ? आप सूर्यों के भी सूर्य हैं। आप ही पूर्ण शक्ति हैं। हमें शक्ति दें। आप पूर्ण बल हैं, मुझे भी बल दें। आप शक्तिशाली हैं, मुझे भी शक्ति प्रदान करें।"

उपर्युक्त सूर्य के बारह नाम सूर्योदय के समय लो। जो सूर्योदय के पूर्व सूर्य के उक्त बारह नामों को लेता है; उसका स्वास्थ्य, जीवन और ओज सदा बना रहता है; उसको आँखों का कोई रोग नहीं होता तथा उसकी दृष्टि सदा तीव्र रहेगी। सूर्योदय के पूर्व उठ कर सूर्य भगवान् से प्रार्थना करो—"हे सूर्य भगवान्! आप संसार के नेत्र हैं, आप विराट् पुरुष की आँख हैं। आप हमें स्वास्थ्य, शक्ति, जीवन और ओज दीजिए।" त्रिकाल सन्ध्याओं में सूर्य को अर्घ्य प्रदान करो।

विषय-सूची

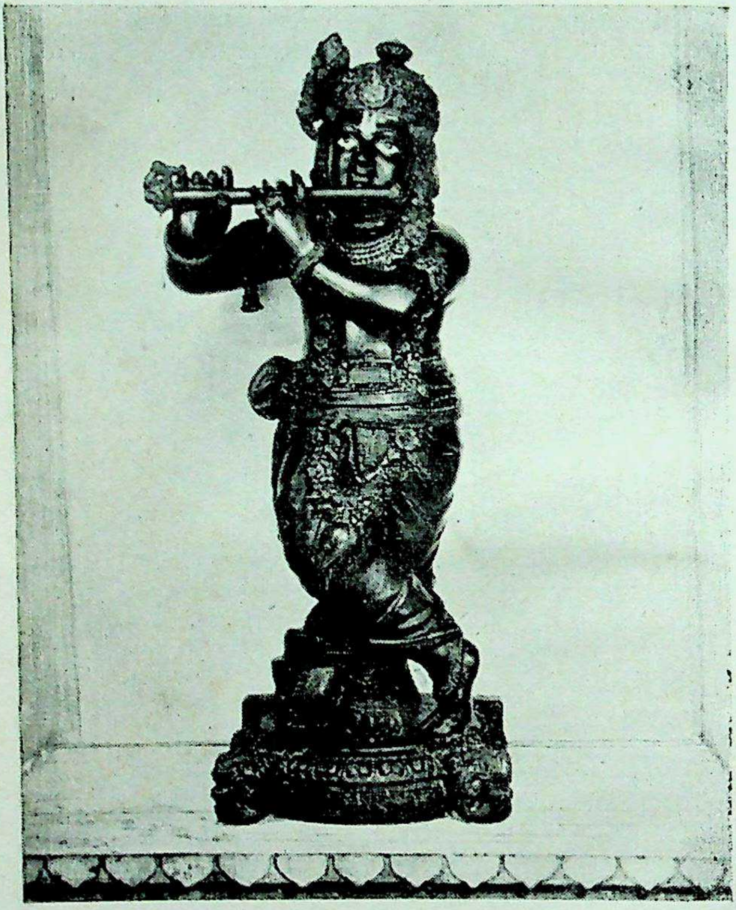
चतुर्थ अध्याय

साधना-प्रकरण

पञ्चम अध्याय

जपयोगियों की कथाएँ

परिशिष्ट



मुरली मनोहर श्री कृष्ण

जपयोग

प्रथम अध्याय

जपयोग-समीक्षा

(१) जप क्या है ?

जप किसी मन्त्र अथवा ईश्वर के नाम को बार-बार दोहराने को कहते हैं । इस कलियुग में, जब कि अधिकतर व्यक्तियों का शरीर-बल पहले जैसा नहीं रहा, हठयोग का अभ्यास केवल कठिन ही नहीं, असम्भव है। ईश्वर-दर्शन का सर्व-सुगम मार्ग केवल जप-साधना ही है । सन्त तुकाराम, भक्त ध्रुव, प्रह्लाद, वाल्मीकि, रामकृष्ण परमहंस इत्यादि सभी ने केवल ईश्वर का नाम जप कर ही उनका साक्षात्कार किया।

जपयोग योग-साधना का एक मुख्य अङ्ग है। गीता में भगवान् कहते हैं कि यज्ञों में मैं जपयज्ञ हूँ अर्थात् यज्ञों में सबसे बड़ा यज्ञ जप है और वह मैं हूँ । कलियुग में केवल जप ही हमें शाश्वत शान्ति प्रदान कर सकता है। इसी से हमको अमरत्व, मोक्ष तथा परम सुख प्राप्त हो सकता है। जप के निरन्तर अभ्यास से साधक समाधि का अनुभव करने लगता है और उसे भगवत्साक्षात्कार हो जाता है । जप हमारे दैनिक जीवन की प्रत्येक क्रिया का एक अङ्ग ही बन जाना

चाहिए । यदि हम निरन्तर जप का अभ्यास करते रहेंगे तो एक न एक दिन जप हमारे स्वभाव में ओतप्रोत हो जायगा, फिर हमें जप करने में किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव नहीं होगा (जैसे हमें खाने, पीने और पहनने में किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव नहीं होता है)। ईश्वर के नाम का जप प्रेम, श्रद्धा तथा पवित्रता की भावना के आधार पर करना चाहिए। जपयोग से श्रेष्ठतर और कोई भी योग नहीं है। जपयोग में सफलता मिलने पर सभी सिद्धियाँ प्रत्यक्ष होने लगती हैं और भक्त मुक्ति की प्राप्ति कर लेता है।

जप किसी मन्त्र के बार-बार उच्चारण को कहा जाता है। ध्यान का अर्थ है ईश्वर के गुणों का ध्यान करना। जप और ध्यान में यही अन्तर है। ध्यान का अभ्यास जप-सहित और जप-रहित—दोनों प्रकार से किया जाता है। आरम्भ में जप-सहित ध्यान करना चाहिए। जैसे-जैसे ध्यान करने का अभ्यास बढ़ता जायगा, जप अपने-आप ही विलीन हो जायगा। इस प्रकार जप-रहित ध्यान का आविर्भाव होता है। किन्तु यह बहुत ऊँची अवस्था है। साधारण कोटि के व्यक्तियों के लिए यह निरन्तर अभ्यास द्वारा सुलभ है। जब आप इस अवस्था को प्राप्त कर लेंगे तब आप सुगमतापूर्वक ध्यान लगा सकते हैं; आपको जप की आवश्यकता प्रतीत नहीं होगी। प्रणव के दो रूप होते हैं—सगुण और निर्गुण। दोनों ब्रह्म के ही रूप हैं। यदि तुम राम के भक्त हो तो 'ओ३म् राम' का जप कर सकते हो। 'ओ३म् राम' का जप वास्तव में सगुण ब्रह्म की उपासना है।

यद्यपि नाम और रूप भिन्न-भिन्न माने जाते हैं, किन्तु वैसे इनको अलग नहीं किया जा सकता। विचार तथा शब्द

अभिन्न हैं। जब तुम अपने पुत्र के बारे में विचार करते हो तो तुरन्त कल्पना में उसका रूप तुम्हारे सामने आ जाता है। इसी प्रकार जब तुम उसके रूप की कल्पना करते हो तो उसके नाम की याद भी स्वतः ही आ जाती है। इसी प्रकार जब तुम राम का नाम लेते हो तो राम का रूप सम्मुख आ जाता है। अतः हम इसी बिन्दु पर पहुँचते हैं कि ध्यान और जप एक साथ रहते हैं। हम ध्यान और जप को अलग-अलग नहीं कर सकते।

जब तुम किसी मन्त्र का जप कर रहे हो तो यह समझो कि तुम वास्तव में इष्टदेवता की प्रार्थना कर रहे हो; वह तुम्हारी प्रार्थना को सुन रहा है; वह तुम्हारी ओर दया-दृष्टि से देख रहा है और वह तुम्हें अपने हाथों से अभयदान दे रहा है, जिससे तुम मोक्ष की प्राप्ति करने में सफल बन सको। ऐसी ही भावना से तुम्हें जप करना चाहिए।

जप-साधना भावनापूर्वक करनी चाहिए। मन्त्र का अर्थ समझना चाहिए। प्रत्येक वस्तु तथा स्थान पर ईश्वर को व्यापक देखो। जब तुम उसके नाम का जप करते हो तो तुम उसके अधिक समीप हो। तुम उसे अपने हृदय-मन्दिर में व्यापक देखने की चेष्टा करो। ऐसा विचार करो कि वह तुम्हारे प्रत्येक कार्य को देखता है—अतः वह तुम्हारे जप को भी देख रहा है।

हमें ईश्वर का नाम पूर्ण विश्वास के साथ गम्भीरतापूर्वक लेना चाहिए। उसका नाम लेना उसकी सेवा करना है। जप करते समय तुम्हारे हृदय में ईश्वर के लिए वही प्रेम और सम्मान होना चाहिए, जो उसके दर्शनों पर तुम्हारे हृदय में उत्पन्न होता है। तुम्हें नाम में पूर्ण विश्वास तथा श्रद्धा होनी चाहिए।

(२) मन्त्रयोग

मन्त्रयोग एक प्रकार का विज्ञान है, जिससे हम इस संसार-सागर से पार हो जाते हैं। मन्त्र-बल द्वारा भव-बन्धन से छूट कर हम ईश्वर का साक्षात्कार करते हैं। ध्यान-सहित जप करने से जीव पाप से छुटकारा पा कर स्वर्ग में भ्रमण करता है। पूर्ण छुटकारा पा लेने पर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—चारों फल प्राप्त हो जाते हैं। मन्+त्र—इन दो अक्षरों के संयोग से मन्त्र शब्द बनता है, जिसका अर्थ होता है मनन करने से त्राण होना (मननात् त्रायते इति मन्त्रः)।

मन्त्र में देवत्व है, गुरुत्व है। यह कहना उचित होगा कि मन्त्र दिव्य शक्ति का प्रतीक है, जप ध्वनि का रूप धारण किये हुए है। मन्त्र स्वयं देवता है। जपने वाले को मन्त्र और मन्त्र के देवता की अभिन्नता का विचार करना चाहिए। जप करने वाले की उक्त धारणा जितनी दृढ़तर होगी, उतनी ही अधिक उसे सहायता भी मिलेगी। जैसे आग की लपट वायु की सहायता से जोर पकड़ती है, वैसे जप करने वाले व्यक्ति की शक्ति मन्त्र-शक्ति से बढ़ती है और उसे अधिकाधिक शक्तिशाली बना देती है।

भक्त की साधना से सुप्त मन्त्र जाग्रत हो उठता है। देवता का मन्त्र उन अक्षरों का समूह है जो जापक के चेतन को देवता का साक्षात्कार करा देता है। मन्त्र-जप द्वारा मनुष्य की दिव्य शक्तियाँ जाग्रत हो उठती हैं।

मन्त्र में स्फुरण-शक्ति होती है, उसमें विस्तार होता है और उसमें से जीवन-शक्ति का अभ्युदय होता है। आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने के लिए यह अनिवार्य हो जाता है कि

हमारे शरीर के सभी अङ्गों में बराबर कार्य करने की शक्ति हो और मन, वाणी तथा कर्म में सामञ्जस्य हो। हमें पूर्णतः दिव्य शक्ति के साथ सामञ्जस्य स्थापित करने की चेष्टा करनी चाहिए। दिव्य शक्ति के साथ सामञ्जस्य स्थापित कर लेने पर हम आध्यात्मिक सत्य को समझ सकेंगे और समझने के पश्चात् उससे ऐक्य हो सकेगा। मन्त्र में ऐक्य और अनुरूपता को स्थापित करने की शक्ति है। मन्त्र-बल द्वारा ऐहिक और आमुष्मिक चेतना का सन्दर्शन किया जा सकता है। मन्त्र-बल से साधक ज्ञान-प्रकाश, स्वतन्त्रता, अविच्छिन्न शान्ति, अनन्त आनन्द तथा अमरत्व की प्राप्ति कर लेता है। मन्त्र-बल में सिद्ध हो जाने से ज्ञान-चक्षु प्राप्त होते हैं।

वाणी की चार अवस्थाएँ होती हैं—(अ) वैखरी अथवा व्यक्त स्वर, (आ) मध्यमा अथवा क्षीण स्वर, (इ) पश्यन्ती अथवा अन्तःकरण का स्वर, और (ई) परा अथवा बीज-अवस्थागत स्वर। अन्तिम प्रकार की ध्वनि दिव्य शक्ति की परिचायिका है और ध्वनि-तत्त्व की महाशक्तिमयी अवस्था है। यह अव्यक्त रहती है। इसका श्रवण आत्म-ज्ञान के उपरान्त ही हो सकता है। परावाणी भाषानुसार विविध नहीं होती है। आत्मा की ध्वनि होने से यह सभी भाषाओं में एक ही होती है।

मन्त्र के जप-साधन से साधक जीवन के चरम लक्ष्य की प्राप्ति कर सकता है भले ही उसे मन्त्रार्थ का ज्ञान न हो, पर इससे कुछ बिगड़ता नहीं। साधक अभ्यास के बल पर ही चरम सिद्धि को प्राप्त कर लेता है। इतना जरूर है कि इससे उद्देश्य-पूर्त्ति में जरा भी सन्देह नहीं। ईश्वर के नाम में अचिन्त्य और अकथनीय शक्ति है; पर यदि मन्त्र का अर्थ

समझ कर जप किया जायगा तो ईश्वर-साक्षात्कार और भी जल्दी हो जायगा।

मन्त्र-जप से हमारे मन की काम, क्रोधादि अपवित्रताएँ दूर हो जाती हैं। जब हम दर्पण को निर्मल कर देते हैं तो उसमें प्रतिबिम्ब स्पष्ट झलकने लगता है। ठीक इसी प्रकार जब अन्तःकरण को अपवित्रता का निराकरण हो जाता है तो शक्ति का प्रतिबिम्ब स्पष्ट होने लगता है। हममें सत्य-दर्शन की शक्ति अधिकाधिक प्राप्त होने लगती है। जिस प्रकार साबुन के उपयोग से वस्त्र को निर्मल बना दिया जाता है, उसी प्रकार मन्त्र-बल से चित्त की अपवित्रता को भी दूर किया जा सकता है। जिस प्रकार अग्नि में तपने पर सोना खरा हो जाता है, उसी प्रकार मन्त्र-रूप-अग्नि में तपने पर मन भी खरा बन जाता है। श्रद्धा और भक्तिपूर्वक अल्पांश जप भी हमारे मन को निर्दोष और पवित्र बना देता है। मन्त्र-जप से हमारे पाप नष्ट होते, हमें आनन्द की प्राप्ति होती और अमरत्व का वरदान मिलता है। इस विषय में सन्देह की गुन्जाइश ही नहीं है।

(३) ध्वनि और मूर्त्ति

ध्वनि स्फुरणात्मिका है। यह निरन्तर स्पन्दित होती रहती है। इसका रूप निश्चित होता है। यह शून्य में एक-एक रूप उत्पन्न करती है और अनेक ध्वनियों के सङ्घात से विशिष्ट शक्ति की उत्पत्ति होती है। विज्ञान के प्रयोगों ने यह सिद्ध किया है कि विशिष्ट ध्वनियाँ विशिष्ट आकृति को जन्म देती हैं। किसी बाजे से निकली हुई ध्वनि भूमि पर विचित्र प्रकार की रेखाओं को अङ्कित कर देती है। अनेक

प्रयोगों से यह सिद्ध हो गया है कि विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ विभिन्न प्रकार की रेखाओं को भूमि पर अङ्कित कर देती हैं। भारतीय सङ्गीत के ग्रन्थों में लिखा है कि सङ्गीत के भिन्न-भिन्न राग और भिन्न-भिन्न रागिनियाँ अपना विशिष्ट रूप रखती हैं। उदाहरणार्थ मेघराग के आकार का इन ग्रन्थों में शानदार वर्णन है, उसे हाथी पर विराजमान दिखाया गया है। वसन्तराग की आकृति एक सुन्दर युवक की-सी है, जो पुष्पों से अलंकृत है। इन सबका तात्पर्य यह है कि प्रत्येक राग-रागिनी ठीक से गाये जाने पर सूक्ष्म लहरों को उत्पन्न करती है, जिनसे स्वरूप-विशेष का आविर्भाव होता है। हाल के वैज्ञानिक प्रयोगों ने इस विश्वास का समर्थन किया है। वाट्स नामक एक महिला ने इस विषय के बहुमूल्य प्रयोग किये हैं। इन्होंने 'ध्वनि के रूप' शीर्षक से एक पुस्तक भी लिखी है, जिसमें इन विविध प्रयोगों का वर्णन है। इन्होंने लार्ड लेटन् की चित्रशाला में अपने इस वैज्ञानिक प्रयोग पर एक भाषण भी दिया था जिसमें इनके अपने ध्वनि-सम्बन्धित प्रयोगों का साङ्गोपाङ्ग वर्णन हुआ था। बड़े परिश्रम से इन्होंने वर्षों तक ध्वनि-सम्बन्धी प्रयोग किये और इस परिणाम पर पहुँची। मिसेज् वाट्स अपना एक वाद्य, जिसका नाम ईडोफोन है, बजाती हैं। इस वाद्य में एक नली संयुक्त रहती है तथा एक रिसीवर और एक झिल्ली भी रहती है। अपने प्रयोगों से मिसेज् वाट्स ने यह विश्वास विस्तारित किया है कि विशिष्ट ध्वनियाँ अपना विशिष्ट रूप और महत्त्व रखती हैं और वे आकाश या धरातल पर उन-उन रूपों को अङ्कित भी कर सकती हैं। इन प्रयोगों का मनोरञ्जक विश्लेषण आपकी उपरिलिखित पुस्तक में है।

फ्रान्स की एक महिला ने एक भजन में माता मरियम को सम्बोधन किया तो माता मरियम की मूर्त्ति उनके सामने आ गयी—उनकी गोद में प्रभु यीशु थे। इसी प्रकार वाराणसी का एक विद्यार्थी, जो फ्रान्स में अध्ययन कर रहा था, भैरव देव की स्तुति करते समय, अपने श्वान-वाहन पर आरूढ़ भैरव के साक्षात् दर्शन कर सका।

इसी प्रकार से ईश्वर का नाम बार-बार लेने से ईश्वर अथवा तुम्हारे इष्टदेवता का, जिसकी तुम पूजा करते हो रूप तुम्हारे सम्मुख प्रत्यक्ष हो जाता है और वह रूप ही केन्द्र का कार्य करता है। इस केन्द्र पर ध्यान स्थापित करने से तुम ईश्वर के प्रभाव का ज्ञान पा सकते हो और यह समझ सकते हो कि यह प्रकाश जो केन्द्र से निकल कर धीरे-धीरे आराधक के हृदय में समा जाता है, उसी से वह अनन्त आनन्द का अनुभव करता है।

जब कोई ध्यान करने बैठता है, उस समय अन्तःकरण की वृत्ति का बहाव बहुत तीव्र हो जाता है। आप ध्यान में जितने संलग्न होंगे बहाव भी उतना ही अधिक तीव्र होता हुआ प्रतीत होगा, चित्त की एकाग्रता से इस शक्ति का तीव्र वेग ब्रह्माण्ड की ओर आमुख होता है और फिर वहाँ से आकर्षण-शक्ति का प्रस्रवण होता है। हमारे अन्तःकरण से एक भावना जागती है, जो हमारे शरीर में व्यापक हो जाती है और उस समय हमें ऐसा प्रतीत होता है, जैसे हम किसी विद्युत्-स्फुरण से भर गये हों। अतः हमें यह स्पष्ट हो गया कि :—

१. ध्वनियाँ आकृति को जन्म देती हैं,

२. ध्वनि-विशेष से आकृति-विशेष का जन्म होता है, तथा

३. यदि विशेष प्रकार की आकृति की उत्पत्ति करनी हो तो लहरात्मिका ध्वनि के साथ उसको उत्पन्न किया जा सकता है।

पञ्चाक्षर-मन्त्र (ओ३म् नमः शिवाय) का जप हमारे सामने शिव की मूर्त्ति को ला कर खड़ा कर देता है। विष्णु का अष्टाक्षर-मन्त्र (ओ३म् नमो नारायणाय) विष्णु के रूप को हमारे सामने प्रत्यक्ष कर देता है। मन्त्रगत ध्वनि में जो लहरें अन्तर्निहित हैं, उनका अपना विशेष महत्त्व है। इसी लिए स्वर तथा मन्त्र के वर्णों पर अधिक जोर दिया जाता है। वर्ण का अर्थ रङ्ग से लिया जाता है। सूक्ष्म जगत् में समस्त ध्वनियों का अपना-अपना एक-एक रङ्ग होता है, अतः प्रत्येक ध्वनि रङ्ग-बिरङ्गी आकृतियाँ उत्पन्न करती हैं। इसी प्रकार प्रत्येक रङ्ग से सम्बन्धित एक-एक ध्वनि होती है। अब हम इस निर्णय पर पहुँचते हैं कि रूप-विशेष की उत्पत्ति के लिए ध्वनि-विशेष का निःसारण करना पड़ता है। मन्त्र-विज्ञान का अध्ययन करने से हमें पता चलता है कि भिन्न-भिन्न देवताओं की प्रार्थना के लिए भिन्न-भिन्न मन्त्र प्रयुक्त करने पड़ते हैं।

यदि तुम शिव के उपासक हो, तो 'ओ३म् नमः शिवाय' का जप करना चाहिए; लेकिन विष्णु और शक्ति के आराधक को दूसरा मन्त्र जपना चाहिए। जब मन्त्र जपते हो तो क्या होता है ? मन्त्र के बार-बार रटने से मन्त्र-सम्बन्धित देवता का रूप तुम्हारे सामने आ जाता है, यही रूप तुम्हारी चेतना का केन्द्र बन जाता है, जिससे तुम उसका सामीप्य अनुभव करने लगते हो। इसलिए कहा गया है कि देवता का मन्त्र वास्तव में स्वयं देवता ही है। यह बात मीमांसकों के कथन

को बिलकुल स्पष्ट कर देती है। मीमांसकों का कथन है कि देवता और मन्त्र में विभिन्नता नहीं। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि जब किसी मन्त्र-विशेष को ठीक रीति से जपा जाता है तो उसके स्पन्दन विशिष्ट-लोक में प्रसारित हो जाते हैं और उतनी देर तक उन स्पन्दनों का एक रूप निश्चित हो जाता है।

द्वितीय अध्याय

नाम का माहात्म्य

(१) नाम-महिमा

ईश्वर के नाम का जप अनोखे आनन्द को जन्म देता है। इसका वर्णन करना कठिन ही नहीं, असम्भव भी है। भगवन्नाम हमारे अन्दर एक प्रकार की अलौकिक शक्ति भर देता है। वह हमारे स्वभाव में आश्चर्यजनक परिवर्त्तन कर देता है। वह मनुष्य को देवताओं के समान गुणों से अलंकृत कर देता है। वह हमारे पुराने पापों, वासनाओं, सङ्कल्पों, सन्देहों, काम-वासनाओं, मलिन चित्त-वृत्तियों तथा अनेक प्रकार के संस्कारों को नष्ट कर देता है।

ईश्वर का नाम कैसा मधुर है! उसमें कैसी अनोखी शक्ति है! वह कितनी शीघ्रता से आसुरिकता को सात्त्विकता में परिणत कर देता है। वह ईश्वर से साक्षात्कार करा देता है और साधक परमात्मैक्य का अनुभव करने लगता है।

भगवन्नाम चाहे जाने में लिया जाय, चाहे अनजाने में, चाहे होशियारी से लिया जाय, चाहे लापरवाही से, चाहे ठीक से लिया जाय, चाहे गलती से, वह वाञ्छित फल की प्राप्ति

अवश्य करायेगा। बुद्धि-विलास और तर्क-सङ्घर्ष द्वारा ईश्वर के नाम की महिमा का मोल नहीं आँका जा सकता। ईश्वर के नाम का महत्त्व तो केवल श्रद्धा, भक्ति और सतत जप के अभ्यास से ही समझा और अनुभव किया जा सकता है। प्रत्येक नाम में अनन्त शक्तियों का भण्डार है। नाम की शक्ति अकथनीय है। उसकी महिमा अवर्णनीय है। ईश्वर के नाम की शक्ति अपरिमित है।

जिस प्रकार अग्नि में जलने योग्य प्रत्येक वस्तु को जला देने की स्वाभाविक शक्ति है उसी प्रकार ईश्वर के नाम में भी पापों, संस्कारों और वासनाओं को जलाने की तथा अनन्त आनन्द और अमर शान्ति प्रदान करने की शक्ति है। जैसे कि दावाग्नि में वृक्ष, काष्ठादि को जलाने की शक्ति स्वाभाविक है, उसी प्रकार ईश्वर के नाम में पाप-रूपी वृक्ष को उसकी जड़ और शाखाओं-सहित जला डालने की अद्भुत और स्वाभाविक शक्ति है। ईश्वर का नाम भाव-समाधि द्वारा भक्त को ईश्वर से मिला देता है और भक्त ईश्वर से ऐक्य का अनुभव करके नित्यानन्द को प्राप्त होता है।

हे मनुष्य! ईश्वर के नाम की शरण में जा। नामी और नाम अभिन्न सत्ताएँ हैं। निरन्तर ईश्वर का नाम जपा कर। प्रत्येक श्वास के साथ ईश्वर के पवित्र नामों का उच्चारण कर। इस कराल कलिकाल में ईश्वरत्व तक पहुँचने के लिए नाम-स्मरण अथवा जप सबसे अधिक सुगम शीघ्र, सुरक्षित और निश्चित मार्ग है। यह अमरत्व और अनन्त आनन्द का दाता है। हे परमात्मन्, तेरी और तेरे नाम की महिमा अपरम्पार है। किसने उसको पूर्ण रूप से जाना है और कौन जानेगा?

अजामिल जैसा पापी केवल ईश्वर का नाम ले कर ही संसार-सागर से पार उतर गया। अजामिल ब्राह्मण-कुल में पैदा हुआ था और बचपन में ब्राह्मण का एक योग्य पुत्र रहा; पर युवा होने पर वह दुर्भाग्यवश एक नीच जाति की लड़की से प्रेम करने लगा जिसकी कुसङ्गति के कारण उसने जीवन-भर घोर पाप किये, किन्तु मरण-काल समीप आने पर अपने पुत्र नारायण को पुकारा। बस फिर क्या था, नारायण के पार्षद उसकी सहायता को आ पहुँचे और वह यमपाश से छुटकारा पा गया। अजामिल की कथा हमें ईश्वर के नाम की अद्भुत शक्ति का उपदेश देती है।

तुम गणिका पिङ्गला की कहानी तो जानते ही होगे। वह श्री राम का नाम लेने से कितनी जल्दी एक साध्वी बन गयी थी। कहा जाता है किसी चोर ने उसे एक तोता भेंट किया था। वह तोता राम का नाम लिया करता था और उस राम-नाम की आवाज़ गणिका के कानों में जाती थी। तोते की वह रामधुनि बहुत ही सुन्दर और मधुर थी। अतः वह उसकी ओर आकर्षित हुई और उसने अपना मन राम-राम शब्द की ओर लगाया। अतः वह राम के साथ पूर्ण रूप से ऐसी मिली कि फिर उनसे कभी अलग नहीं हुई। ऐसी है ईश्वर के नाम की महिमा! यह अत्यन्त दुःख का विषय है कि जिन लोगों ने विज्ञान का अध्ययन किया है और जो विद्वान् होने का दावा करते हैं, वे नामस्मरण में अब विश्वास खो बैठे हैं। यह बड़ी लज्जा की बात है; कोई बड़प्पन की नहीं।

ऐसी है राम-नाम की महिमा। हमें राम का नाम पूर्ण विश्वास और श्रद्धा से जपना चाहिए। जब तुम तुलसीदास

की रामायण का अध्ययन करोगे, तो पता चलेगा कि इस राम-नाम में कितनी अद्‌भुत शक्ति है।

गान्धी जी लिखते हैं—"तुम मुझसे पूछोगे कि मैं तुमसे राम का ही नाम लेने को क्यों कहता हूँ, ईश्वर के दूसरे नामों को लेने को क्यों नहीं कहता ? सच है, ईश्वर के नाम अनेक हैं, एक वृक्ष की जितनी पत्तियाँ होती हैं, उनसे भी अधिक। मैं तुमसे कह सकता हूँ कि ईश्वर शब्द का उपयोग करो। लेकिन ईश्वर शब्द कौन-सा अर्थ और कौन-सी धारणा तुम्हारे समक्ष उपस्थित कर सकेगा ? ईश्वर शब्द कहने के साथ-साथ तुम्हारे अन्दर कोई-न-कोई भावना उत्पन्न हो जानी चाहिए। इसके लिए तुम्हें ईश्वर शब्द का विश्लेषण करना होगा। सब कोई तो ऐसा नहीं कर सकते।

"लेकिन जब मैं तुम्हें राम का नाम लेने को कहता हूँ तो मैं तुम्हें एक ऐसा नाम बताता हूँ, जिसको भारतीयों की अनेक पीढ़ियों ने पूजा है। राम-नाम ऐसा नाम है, जिससे इस देश के मनुष्य ही नहीं, वरन् पशु-पक्षी, यहाँ तक कि वृक्ष और पत्थर तक भी सदियों से परिचित हैं। रामायण पढ़ने से हमें ज्ञात होता है कि जब रामचन्द्र जी राजा जनक के धनुष-यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए जा रहे थे तो एक पत्थर ने उनके चरण-स्पर्श से जीवन प्राप्त कर लिया था।"

राम-नाम को ऐसी मधुरता और भक्ति के साथ लेना सीखना चाहिए कि जब तुम राम का नाम गाओ तो तुम्हें सुनने के लिए वृक्ष भी अपनी पत्तियाँ तुम्हारी ओर झुका दें।

कबीरदास ने अपने बेटे कमाल को एक बार इस बात पर बहुत डाँटा कि उसने एक धनी [illegible] को कोढ़ से निर्वाण पाने

के लिए दो बार राम-नाम लेने को कह दिया था। कमाल ने उस व्यापारी से दो बार राम-नाम लेने को कहा, लेकिन फिर भी उसका रोग ठीक नहीं हुआ। कमाल ने इस बात की अपने बाप को सूचना दी। कबीरदास इस पर बहुत कुपित हुए और कमाल से कहा—"तुमने उस धनी को दो बार राम-नाम लेने को कहा। इससे मुझे कलङ्क लगा है। राम का नाम तो केवल एक ही बार लेना पर्याप्त है। अब तुम उस व्यापारी के शिर पर छड़ी से खूब मार लगाओ और उससे कहो कि वह गङ्गा में खड़े हो कर अन्तःकरण से एक बार राम-नाम ले।" कमाल ने अपने पिता के आदेशों का अनुसरण किया। उसने उस धनी व्यापारी के शिर पर खूब मार लगायी। उस व्यापारी ने भाव-सहित केवल एक बार राम का नाम लिया और उसका रोग बिलकुल ठीक हो गया।

कबीरदास ने कमाल को तुलसीदास के पास भेजा। कमाल के सामने ही तुलसीदास ने एक तुलसी की पत्ती पर राम का नाम लिखा और उस पत्ती का रस पाँच सौ कुष्ठरोगियों पर छिड़क दिया। सब-के-सब कुष्ठरोगी ठीक हो गये। इस पर कमाल को बहुत आश्चर्य हुआ। फिर कबीरदास ने कमाल को अन्धे सूरदास के पास भेजा। सूरदास ने कमाल को एक लाश लाने के लिए कहा जो नदी में बह रही थी। कमाल लाश को ले आया। सूरदास ने उस लाश के एक कान में राम कहा और लाश में प्राणों का समावेश हो गया। यह सब देख कर कमाल का हृदय आश्चर्य और आदर से भर गया। राम-नाम की ऐसी शक्ति है! मेरे प्रिय मित्रो, विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियो, प्रोफेसरो और डाक्टरो! तुम अपनी लौकिक विद्या पर फूल न जाओ। अपने दिल

से सप्रेम और भाव-सहित ईश्वर का नाम लो और अनन्त आनन्द, ज्ञान, शान्ति और अमरत्व की प्राप्ति करो। राम-नाम लेने से यह सब-कुछ तुम्हें इसी जन्म में—इसी जन्म में क्यों, इसी क्षण सहज ही में प्राप्त हो जायेंगे।

कबीरदास कहते हैं—"अगर कोई केवल स्वप्न में ही राम-नाम कहता है तो मैं उसके लिए अपनी खाल से उसके प्रति-दिन के प्रयोग के लिए एक जोड़ी जूते बनाना पसन्द करूँगा।" ईश्वर के पवित्र नाम की महिमा को कौन कह सकता है! ईश्वर के पवित्र नामों का महत्त्व और प्रताप वास्तव में कौन जान सकता है! यहाँ तक कि पार्वती, जो शिव की अर्द्धा-ङ्गिनी हैं, ईश्वर के नाम के वास्तविक गौरव और महत्त्व का ठीक-ठीक शब्दों में वर्णन करने में असफल रहीं। जो कोई उसका नाम सुनता है या स्वयं गाता है, वह अपने-आप ही बिना जाने हुए आध्यात्मिकता के शिखर पर जा पहुँचता है। वह अपनी लोक-वासना को खो बैठता है और आनन्दमग्न हो जाता है। वह अमरत्व का दिव्यामृत पान करने लगता है। वह दिव्य उन्माद में झूमने लगता है। ईश्वर के नाम का जप भक्त को भगवद्-सान्निध्य का साक्षात् अनुभव करा देता है। ईश्वर का नाम कैसा शक्तिशाली है! जो उसके नाम का जप करता है, वह असीम आनन्द और शान्ति की प्राप्ति करता है। जो उसका नाम जपता है, वह वास्तव में भाग्यवान् है; क्योंकि वह आवागमन से विमुक्त हो जायेगा।

यद्यपि पाण्डवों का लाक्षागृह जल कर खाक हो गया, किन्तु वे नहीं जल मरे; क्योंकि उनको हरि के नाम में अवि-चल श्रद्धा थी, विश्वास था। गोपालकों को अग्नि से कुछ भी हानि नहीं हुई; क्योंकि उनको ईश्वर के नाम में अटूट

विश्वास था। यद्यपि राक्षसों ने हनुमान् की पूँछ को आग लगा दी, किन्तु वे जले नहीं; क्योंकि उनको राम-नाम में अद्भुत विश्वास था। प्रह्लाद ने ईश्वर के नाम की ही शरण ली, अतः उनको भी अग्नि जला न सकी। सतीत्व की परीक्षा लेने के लिए सीता जी को अग्नि-प्रवेश कराया गया; किंतु अग्नि की भयङ्कर लपटें उनके लिए शीतल जल हो गयीं; क्योंकि राम का नाम ही उनके जीवन का आधार था। विभीषण का राम-नाम में अटल विश्वास था, अतः समस्त लङ्का के जल जाने पर भी उसका गृह सुरक्षित रहा। ऐसी महिमा है ईश्वर के नाम की !

(२) जप से लाभ

I

जप हमारी विचाराधारा को सांसारिक वस्तुओं की ओर जाने से रोकता है। वह हमारे अन्तःकरण को ईश्वर की ओर प्रेरित करता है और अनन्त आनन्द और सुख की प्राप्ति के लिए हमें उत्प्रेरित करता है। अन्त में वह हमें ईश्वर के दर्शन करने में सहायता देता है। जब कभी साधक अपनी साधना में ढीलढाल करता है, मन्त्र-शक्ति उसमें पुनः आत्मशक्ति का सञ्चार करती है। निरन्तर तथा सतत सेवित जप-साधना से हमारे चित्त में अच्छे संस्कारों की पीठिका तैयार होने लगती है।

जप करते समय हमारे अन्दर भागवत-गुणों का स्रोत प्रस्रवित होने लगता है। जप से अन्तःकरण की वृत्ति का नव-निर्माण होने लगता है और सात्त्विक वृत्तियों को चित्त में पर्याप्त स्थान मिल जाता है।

जप से मानसिक ढाँचे का निर्माण होता है और राजसिक तथा तामसिक विचार सात्त्विकता के अनुरूप ढलने लगते हैं।

जप से चित्त शान्त रहता है और उसे शक्ति की प्राप्ति भी होती है। वह हमारे अन्तरात्मा को आत्म-विचारों के उपयुक्त बनाता है। जप से मन की आसुरिक प्रवृत्तियों के प्रतिबन्ध का समावेश होता है। वह सब प्रकार के बुरे विचारों और क्षुद्र चित्त-वृत्तियों और अभिलाषाओं को निकाल फेंकता है। वह हमारे अन्दर दृढ़ सङ्कल्प तथा आत्म-संयम उत्पन्न करता है। अन्त में वह हमें ईश्वर के दर्शन कराता है और उससे हमें आतमसाक्षात्कार हो जाता है।

निरन्तर जप और पूजन से हमारा चित्त स्वच्छ तथा निर्मल हो जाता है और उसमें उच्च और पवित्र विचार भर जाते हैं। किसी मन्त्र का जप तथा किसी भी देवता का पूजन हमारे अन्दर अच्छे संस्कार ही बनाता है। मनुष्य जैसा अपने को समझता है, वैसा ही हो जाता है। यह एक मनोवैज्ञानिक नियम है। जो मनुष्य अपने को उच्च विचार और पवित्र विचारों का धारण करने में दक्ष बना लेता हैं, उसके अन्दर वैसी स्वाभाविक प्रवृत्ति जागने लगती है। मस्तिष्क में निरन्तर पवित्र विचारों के रहने से उसका चरित्र ही बदल जाता है। जप और पूजन के समय जब मन ईश्वर की मूर्त्ति पर विचार करता है, तब मानसिक आकृति वैसा ही रूप धारण कर लेती है। हमारी संस्कार-पीठिका का यह विशेष नियम है कि उस पर कोई भी छाप अङ्कित हो जाती है। जब कोई काम बार-बार किया जाता है तो संस्कार अधिक दृढ़ हो जाते हैं और बार-बार दोहराने से मन का स्वभाव या प्रवृत्ति बन जाती है। जो मनुष्य दिव्य विचारों को ग्रहण करता है, वह निरन्तर विचार और ध्यान के कारण स्वयं ही देवत्व में दीक्षित हो जाता है। उसका भाव अथवा

उसकी प्रकृति बिलकुल निर्मल हो जाती है। ध्याता और ध्येय और पुजारी तथा उसका आराध्य, विचारक और विचारणीय दोनों मिल कर बिलकुल एक हो जाते हैं। कहा जाता है कि एक शरीर, दो आत्मा, पर वहाँ तो दो आत्माओं का प्रश्न ही नहीं रहता—आत्मा का परमात्मा में विलयीकरण हो जाता है। यही समाधि की अवस्था है। यही पूजा, उपासना अथवा जप करने का फल है।

ईश्वर के नाम का मानसिक जप सब रोगों को दूर करने के लिए अद्भुत पुष्टिकारक पदार्थ तथा अमोघ औषधि है। किसी भी हालत में और किसी भी दिन इसमें कोई कमी नहीं होनी चाहिए। जप को खाने के समान नितान्त अनिवार्य जानना चाहिए। यह भूखी आत्मा के लिए आध्यात्मिक आहार है। महात्मा ईसा का कहना है—"तुम केवल रोटी पर जीवन व्यतीत नहीं कर सकते हो, पर केवल ईश्वर के नाम पर जीवन धारण कर सकते हो।" तुम उस अमृत ही को पान करके जीवित रह सकते हो, जो ध्यान और जप के समय तुम्हारे अन्तःकरण की पीठिका पर प्रवाहित होने लगता है। यहाँ तक कि यन्त्र-वत्, भगवन्नाम लेने से भी उसका बहुत प्रभाव होता है। वह हमारे चित्त को स्वच्छ और पवित्र बना देता है। यह प्रहरी का काम करता है। वह हमें यह सूचित करता रहता है कि कब सांसारिक विचार अन्तःकरण में प्रवेश कर रहे हैं। जैसे ही तुम्हें यह पता लगे कि सांसारिक विचार तुम्हारे मन में प्रवेश कर रहे हैं, वैसे ही मन्त्र-स्मरण द्वारा उनको दूर भगा सकते हो। यन्त्रवत् जप करते समय भी तुम्हारे चित्त का एक भाग इस कार्य में संलग्न रहता है।

जब तुम्हारा कोई मित्र भोजन करता है, उस समय

तुम मूत्र अथवा विष्ठा शब्द कह दो तो उससे उलटी होने लगती है। जब तुम गरम-गरम चाट की सोचते हो तो तुम्हारे मुँह में पानी आ जाता है। इससे ज्ञात होता है कि प्रत्येक शब्द में कुछ-न-कुछ शक्ति अवश्य निहित है। जब साधारण शब्दों में ऐसी शक्ति है तो ईश्वर के नाम में उससे कितने गुना अधिक शक्ति होगी, इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। भगवन्नाम का मन पर एक अनोखा प्रभाव पड़ता है। वह हमारे चित्त और उसकी वृत्तियों में आमूल परिवर्त्तन कर देता है। हमारे पुराने संस्कारों की काया में पलट होने लगता है। प्रत्येक जीव में बद्धमूल आसुरी वृत्ति को जड़ से खोद कर फेंकने का श्रेय एकमात्र नाम-जप को ही है। यह बात असन्दिग्ध है कि भगवन्नाम ही साक्षात् भगवान् से भक्त का साक्षात्कार करा देता है।

केवलमात्र नाम-स्मरण ही सारी तकलीफों और कठिनाइयों से मुक्त है। भगवन्नाम का जप सबसे सरल है और सुखद भी है। इसीलिए इसे मोक्ष के सभी साधनों में श्रेष्ठ बताया गया है।

जब तुम नाम-जप करते हो, उस समय हृदय में अपने इष्टदेवता के प्रति अनन्य भक्ति का विकास कर लेना चाहिए और साथ ही मन से सांसारिक विचारों को निकाल फेंकना चाहिए। मस्तिष्क में ईश्वर के अतिरिक्त और किसी विचार को स्थान ही नहीं देना चाहिए। चित्त का प्रत्येक कण ईश्वर से परिप्लावित रहना चाहिए। इस साधना में भरसक प्रयत्न की आवश्यकता है। भक्ति को अव्यभिचारिणी बनाने का पूरा प्रयत्न करना होगा।

तीन महीने कृष्ण की उपासना, तीन माह राम की उपासना और फिर शक्ति की उपासना और उसके बाद शिव की उपासना करना—यह ठीक नहीं है। इसे व्यभिचारिणी भक्ति कहते हैं। यदि तुम कृष्ण के उपासक हो तो आजीवन उन्हीं की उपासना करते रहो। यह तुम्हें भली-भाँति मालूम होना चाहिए कि जिस प्रकार कुरसी, मेज, तिपाई, छड़ी, आलमारी सभी में लकड़ी ही है, उसी प्रकार सभी वस्तुओं में केवल कृष्ण ही रमा हुआ है। यही अनन्य भक्ति है। इसे ही परा-भक्ति कहा जाता है।

मन्त्र का जप करते समय मन में सात्त्विक भावना अर्थात् शुद्ध भावना का उदय होने दो। यदि चित्त मल-रहित हो गया तो सात्त्विक भावना स्वतः ही उत्पन्न हो जायेगी। यहाँ तक कि अनजाने भी बार-बार ईश्वर का नाम लेने से बड़ा प्रभाव परिलक्षित होता है। जप करने से जो मानसिक स्पन्दन विकसित होते हैं, उनसे चित्त का प्रक्षालन होता है और शुद्धि का अवतरण होने लगता है।

जपाभ्यास के लिए प्रारम्भ में एक माला का रखना अनिवार्य है। कुछ समय तक अभ्यास हो जाने पर फिर मानसिक जप भी किया जा सकता है। जप की मात्रा में जितनी वृद्धि होती जायेगी, हृदय भी उतने ही वेग से शुद्ध होता जायेगा। साधक को इस शुद्धि का प्रत्यक्ष अनुभव होने लगता है। साधक को अपने गुरु-मन्त्र पर अविचल विश्वास होना चाहिए। जप करने का मन्त्र जितना संक्षिप्त होगा, धारणा की शक्ति उतनी ही अधिक होगी। सब मन्त्रों में राम-नाम परमोत्तम है। इसका जप अत्यन्त सरल भी है।

II

जप हृदय को शुद्ध बनाता है।
जप मन को स्थिर बनाता है।
जप षड्रिपुओं का विनाश करता है।
जप आवागमन का निवारण करता है।
जप पापों की राशि को जला देता है।
जप से तमाम संस्कार भस्मीभूत हो जाते हैं।
जप राग को नष्ट कर देता है।
जप से वैराग्य का अवतरण होता है।
जप हमारी अनियन्त्रित और व्यर्थ इच्छाओं का दमन करता है।
जप हमें निर्भय बनाता है।
जप हमारे भ्रम का निवारण करता है।
जप साधक को अमर शान्ति देता है।
जप प्रेम का विकास करता है।
जप भक्त का भगवान् से संयोग करा देता है।
जप से आरोग्य, धन, शक्ति और चिरायु की प्राप्ति होती है।
जप हमें ईश्वर का ज्ञान कराता है।
जप अनन्त आनन्द देता है।
जप से कुण्डलिनी शक्ति जागृत होती है।

III

जप हमें आध्यात्मिकता में दीक्षित करा देता है।
जप से हमारे लिङ्ग-शरीर का रहस्यमय रीति से प्रक्षालन होता है।
जीवन की तमाम गन्दगी जप से धोयी जा सकती है।

यदि तुम अपने आराध्य देव की मूर्त्ति में अपने को लय नहीं कर सकते और उन पर अपने मन को नहीं लगा सकते तो जपाभ्यास से निकलने वाली ध्वनि को सुनने की चेष्टा करो, अथवा मन्त्र के वर्णों पर सार्थ विचार करो। अब तुम्हारा ध्यान एकत्रित होने लगेगा।

IV

मृत्यु का आगमन कभी भी हो सकता है। वह किसी भी क्षण हमें अपने पञ्जों में दबा लेगी। जीवन केवलमात्र खाने, पीने के लिए नहीं है।

मनुष्य-योनि की प्राप्ति अनेक जन्मों के पुण्यों के सञ्चय से होती है। अतः प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है भगवन्नाम का जप करना।

इस कलिकाल में राम-नाम सबसे बड़ा हकीम है, जिससे भवरोग का उपचार किया जा सकता है। राम-नाम के साधक के पास यमराज का कराल रूप फटकने भी नहीं पाता है।

जप के अभ्यास से पञ्च क्लेश और तापत्रय नष्ट होते हैं।

अग्नि जिस प्रकार विशालतम रुई के ढेर को जला देती है, उसी प्रकार जप भी सभी कर्मों को जला देता है।

गङ्गा जी जैसे सभी गन्दे वस्त्रों को साफ कर देती हैं, उसी प्रकार जप भी दूषित मन को निर्मल बनाता है।

जिस साधक में ईश्वर-दर्शन की अथक लौ है, वह नित्य नियमपूर्वक ब्राह्ममुहूर्त्त में जाग जाता है, पद्मासन में बैठ कर भाव और प्रेम-सहित भगवन्नाम की माला फेरता है। वह मानसिक जप का अभ्यास भी करता रहता है और कभी-कभी तारस्वरेण नाम-सङ्कीर्त्तन करता है। जब-जब उसका मन

विषय-पदार्थों में भटकने लगता है, तब-तब वह तारस्वरेण नामोच्चारण करता है। वह गङ्गा-तीर निवास कर अनुष्ठान करता है। कभी केवल दुग्धाहार और कभी फलाहार पर और कभी उपवास का अभ्यास कर साधना में लीन रहता है।

ऐसे सत्यशील साधक को मनःशान्ति मिलती है और वह दिव्य अनुभवों में अपने को दीक्षित कर लेता है। जब उसका अनुष्ठान समाप्त हो जाता है, जब उसका पुरश्चरण पूर्ण हो जाता है, वह ब्राह्मणों, साधुओं, और गरीबों को भोजन खिलाता है।

इस प्रकार वह भगवान् को प्रसन्न करता है और भगवद्-अनुग्रह और वरदान का भागी होता है। इस प्रकार वह अमरत्व, परम सिद्धि और पूर्ण आनन्द प्राप्त करता है।

जप का तेज उसके मुखमण्डल को दिव्यत्व से मण्डित कर देता है। उसके जीवन में नवीन प्रकाश का उदय होता है। उसे अनेक ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त होती हैं और वह जीवन को सार्थक और सफल बना लेता है।

तृतीय अध्याय

मन्त्रों के विषय में

(१) प्रणव

ओ३म् प्रत्येक वस्तु की स्थिति का प्रतीक है। ओ३म् ईश्वर का नाम अथवा उसका प्रतीक है। सबका वास्तविक नाम ओ३म् है। मनुष्य के तीनों प्रकार के अनुभव ओ३म् में ही सन्निहित हैं। ओ३म् समस्त प्रकृति का निर्देशक है। वास्तव में ओ३म् से ही यह व्यक्त जगत् हुआ है। संसार की सत्ता ओ३म् में ही है और अन्त में जगत् ओ३म् में ही लय हो जाता है। 'अ' वर्ण स्थूल जगत् को व्यक्त करता है। 'उ' अन्त-र्जगत् को अभिव्यक्त करता है, जिसका आत्मा तेजस् है। 'म्' में जगत् की सामष्टिक सुषुप्तावस्था सन्निहित है, जो साधारण चेतना को अतिक्रमण करके रहता है। ओ३म् समस्त सृष्टि का प्रतीक है जो समस्त विचार और बुद्धि का आधार है। ओ३म् में समस्त वस्तुओं की स्थिति आधारित है। ओ३म् सभी शब्दों का विशाल गर्भ है। सभी कार्य ओ३म् में ही केन्द्रीभूत हैं। अतः ओ३म् ही समस्त ब्रह्माण्ड का स्रष्टा है। संसार ओ३म् में स्थित रहता है और अन्ततः ओ३म् में विलय को प्राप्त हो जाता है। जैसे ही तुम ध्यान के लिए बैठते हो, तीन या छः वार ओ३म्

का गम्भीर स्वर में उच्चारण करो। यह तुम्हारे अन्तःकरण से सभी सांसारिक विचारों को भगा देगा और चित्त को इधर-उधर भ्रमण करने से रोक देगा। तदनन्तर ओ३म् का मानसिक जप करो।

प्रणव के जप का मस्तिष्क पर अद्भुत प्रभाव पड़ता है, जो जादू के समान आश्चर्यजनक होता है। प्रणव का उच्चारण इतना पवित्र और सारगर्भित है कि जो भी इसका श्रवण करता है, वह इसे माने बिना नहीं रहता। ओ३म् की स्पन्दन-शक्तियाँ इतनी शक्तिशाली होती हैं कि अगर कोई इसका सूक्ष्म विश्लेषण करे तो इसकी अलौकिक शक्ति की सत्ता माने बिना नहीं रहेगा। यद्यपि साधारणतः लोग इसे मानने को तैयार नहीं होंगे, फिर भी प्रयोगों से यह सब-कुछ सिद्ध हो चुका है। ओ३म् का उच्चारण और उसकी प्रतिक्रिया कोमलमना विद्यार्थियों पर अद्भुत प्रभावशालिनी सिद्ध हो सकती है। इसके स्पन्दनों से समस्त शरीर में विद्युत्स्फुरण प्रसरित होने लगते हैं। शरीर के अन्दर जो स्वाभाविक जड़ता रहती है, उसका निवारण भी इसके गम्भीर उच्चारण से किया जा सकता है।

(२) हरि-नाम

मन्त्र के छः अङ्ग होते हैं। प्रत्येक मन्त्र का एक ऋषि होता है, जिसने उस मन्त्र द्वारा सर्वप्रथम साक्षात्कार किया हो और फिर उस मन्त्र को दूसरों को दिया हो। गायत्री-मन्त्र के ऋषि विश्वामित्र हैं। प्रत्येक मन्त्र वृत्तात्मक या छन्दात्मक होता है। प्रत्येक मन्त्र का कोई एक विशेष देवता होता है। प्रत्येक मन्त्र का बीज भी होता है। यह मन्त्र को

शक्ति देता है। यह मन्त्र का सार होता है। प्रत्येक मन्त्र विशेष शक्ति-समन्वित होता है। छठा अङ्ग है कीलक, जिसे स्तम्भ-रूप समझना चाहिए। इसमें मन्त्र-चैतन्य गूढ़ रूप से निहित रहता है। कीलक के स्थानान्तरित होने से मन्त्र में निहित चैतन्य बिलकुल स्पष्ट हो जाता है और भक्त को इष्ट-देवता के दर्शन होते हैं।

मन्त्र-बल से भक्त अपने इष्टदेवता का साक्षात्कार कर सकता है। मन्त्र और इष्टदेवता में एकात्म्य है।

ईश्वर-नाम के केवल स्मरणमात्र से ही हमारे अनेक जन्म के पाप नष्ट हो जाते हैं।

"हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥"

इस कलियुग में केवल हरि का नाम ही सार है। मोक्ष की प्राप्ति का और कोई साधन इस कलिकाल में नहीं है। केवल-मात्र एक ही विधि है और एक ही उपाय है।

बड़े-से-बड़े पापी के पापों का नाश ईश्वर-नाम-स्मरण से हो जाता है। केवल इतना ही नहीं, नाम-जप से हमें अनन्त आनन्द, आत्म-साक्षात्कार और दिव्य शक्ति की प्राप्ति होती है। यह है हरि के नाम का महत्त्व।

"राम न सकहिं नामगुण गाई।" यहाँ तक कि राम अर्थात् स्वयं ईश्वर भी नाम की महिमा का ठीक-ठीक वर्णन नहीं कर सकते, फिर भला मनुष्य की तो बात ही क्या है! इस कलियुग में तो ईश्वर के नाम के जप की और भी अधिक आवश्यकता है; क्योंकि "कलियुग केवल नाम अधारा"—इस कराल कलिकाल में केवल ईश्वर के नाम का ही एक सहारा

है। नाम के जप के अतिरिक्त अनन्त आनन्द और शान्ति का देने वाला कोई भी अधिक सुगम और सरल उपाय नहीं है।

"राम नाम मणि दीप धरु, जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहरेहु, जो चाहसि उजियार॥"

तुलसीदास जी कहते हैं कि यदि तू भीतर और बाहर दोनों ही ओर उजाला चाहता है तो जीभ-रूपी देहरी पर राम-नाम-रूपी मणि का दीपक रख।

"उलटा नाम जपत जग जाना।
वाल्मीकि भये ब्रह्म समाना॥"

समस्त संसार जानता है कि उलटा नाम जपने से ही वाल्मीकि ब्रह्म हो गये। वाल्मीकि ने राम के स्थान पर मरा-मरा नाम-जप किया था।

जब उलटे नाम का इतना प्रभाव है तो ईश्वर के सही नाम की महिमा कौन कह सकता है?

"गाफिल है तू, घड़ियाल यह देता है मनादी।
गरदूं ने घड़ी उमर की तेरी इक और घटा दी॥"

ओ लापरवाह! घण्टा तुझे बार-बार याद दिला रहा है कि तेरे जीवन का समय निरन्तर घटता जा रहा है। अतः,

"राम नाम की लूट है, लूट सके तो लूट।
अन्तकाल पछतायगा, जब प्राण जायेंगे छूट॥"

तुम्हें ईश्वर का नाम अधिक-से-अधिक लेने की भरसक चेष्टा करनी चाहिए। नहीं तो जीवन के अन्तिम क्षणों में, जब मृत्यु तुम्हारे सिर पर मँडराती होगी और जब यह प्राण

तुम्हारे शरीर से निकलने लगेंगे, तब तुम पश्चात्ताप करोगे और हाथ मलोगे।

"राम नाम आराधनो तुलसी वृथा न जाय।
लरकाई को पैरिवो आगे होत सहाय॥
तुलसी अपने राम को रीझ भजो या खीज।
उलटा सीधा जामिहैं खेत परे ते बीज॥"

गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं—"राम के नाम की आराधना कभी बेकार नहीं जाती जैसे बचपन में किया हुआ तैरने का अभ्यास कभी भविष्य में सहायता कर सकता है।" वह कहते हैं 'कि तुम चाहे राम को प्रसन्नतापूर्वक भजो या कुपित हो कर, उसका प्रभाव अवश्य ही होगा, जैसे कि खेत में पड़ा हुआ बीज अवश्य ही फल देता है, चाहे वह ठीक से डाला गया हो और चाहे गलत तरीके से—वह अपना फल दिखाये बिना रहेगा नहीं।'

जो लोग इस बात में विश्वास न करें, वे केवल इसकी जाँच करने के लिए ही कुछ दिनों तक राम-नाम की आराधना करें। जाँच करने पर जैसा उचित समझें, करें। व्यर्थ के वाद-विवाद और तर्क में तो समय नष्ट करना केवल मूर्खता है। जीवन थोड़ा है, समय जल्दी बीत रहा है। शरीर का निरन्तर अवसान होता जा रहा है। इस संसार में सब-कुछ नाशवान् है। अतः राम-नाम की शरण में जा कर भव-बन्धनों से मुक्त हो जाओ।

(३) कलिसन्तरणोपनिषद्

द्वापर युग के अन्त में नारद ऋषि ब्रह्मा के पास गये और उनसे पूछा—"हे भगवन्, मैं इस संसार में रमते हुए कलियुग

को कैसे पार कर सकूँगा ?" ब्रह्मा ने कहा—"तुम उस कथन को सुनो, जो श्रुतियों में सन्निहित है और जिससे मनुष्य कलियुग में संसार को पार कर सकता है। केवल नारायण का नाम लेने से मनुष्य इस कराल कलियुग के बुरे प्रभाव को दूर कर सकता है।" फिर नारद ने ब्रह्मा से पूछा—"मुझे वह नाम बताइए।" तब ब्रह्मा ने कहा—

"हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥"

"ये सोलह नाम हमारे सन्देह, भ्रम तथा कलियुग के बुरे प्रभाव को दूर कर देते हैं। ये अज्ञान का निवारण कर देते हैं। ये मन के अन्धकार को दूर कर देते हैं। फिर जैसे कि ठीक दोपहर के समय सूर्य्य अपने पूर्ण तेज-सहित भासमान होता है, वैसे ही परब्रह्म अपने पूर्ण प्रकाश के साथ हमारे हृदयाकाश में प्रकाशित हो जाते हैं और हम समस्त संसार में केवल उनकी ही अनुभूति करते हैं।"

नारद जी ने पूछा—"हे भगवन्, कृपया आप मुझे वे नियम बताइए, जिनका पालन जप करते समय करना चाहिए।" ब्रह्मा ने उत्तर दिया—"इसके लिए कोई भी नियम नहीं है। जो कोई भी जिस अवस्था में भी इस मन्त्र का उच्चारण करता है ब्रह्म की प्राप्ति का भागी होता है।

"जो कोई साढ़े तीन करोड़ बार सोलह नामों से बने हुए इस महामन्त्र का जप करता है वह ब्रह्महत्या तक के पाप से छुटकारा पा जाता है। वह स्वर्ण की चोरी के पाप से भी छुटकारा पा जाता है। वह नीच जाति की स्त्री के साथ सहवास करने से भी छुटकारा पा जाता है। वह जो कुछ हमारे मनुष्यों, पितरों और देवताओं के प्रति बुराई करता है, इसके पाप से भी छूट

जाता है। सब धर्मों के छोड़ देने के कारण वह सब पापों से छूट जाता है। वह संसार के सब बन्धनों से छुटकारा पा कर मुक्ति की प्राप्ति करता है। यह कृष्ण-यजुर्वेद का कलि-सन्तरण नामक उपनिषद् है। बङ्गाल में इस मन्त्र का बहुत प्रचार है। यह बङ्गाल के वैष्णव सम्प्रदाय का प्रिय मन्त्र है।"

(४) जप-विधान

जप किसी मन्त्र अथवा ईश्वर-नाम को बार-बार भाव तथा भक्तिपूर्वक दोहराने को कहते हैं। जप चित्त की समस्त बुराइयों का निवारण कर ईश्वर से जीव का साक्षात्कार कराता है।

प्रत्येक नाम अचिन्त्य शक्ति-समन्वित है। जैसे अग्नि में प्रत्येक वस्तु को भस्म करने की स्वाभाविक शक्ति है, उसी प्रकार ईश्वर के नाम में हमारे पापों और वासनाओं को विदग्ध कर देने की शक्ति है।

सब मीठी वस्तुओं से अधिक मीठा, सब अच्छी चीजों से अधिक अच्छा और सब पवित्र वस्तुओं से अधिक पवित्र ईश्वर का नाम है।

इस संसार-सागर को पार करने के लिए ईश्वर का नाम सुरक्षित नौका के समान है। अहंभाव को नष्ट करने के लिए ईश्वर का नाम अचूक अस्त्र है।

ईश्वर के नाम का जप मनुष्यों में आध्यात्मिक शक्ति तथा गति उत्पन्न कर देता है और आध्यात्मिक संस्कारों को अधिक प्रबल बना देता है।

मन्त्र-जप से आध्यात्मिक स्फुरण उत्पन्न होते हैं। यह स्फुरण निश्चित रूप वाले होते हैं। 'ओ३म् नमः शिवाय' का जप मस्तिष्क में शिव का रूप उत्पन्न करता है और 'ओ३म् नमो नारायणाय' का जप हरि का रूप प्रत्यक्ष कर देता है।

ईश्वर के नाम की महिमा बुद्धि तथा तर्क से नहीं आँकी जा सकती। उसका तो केवल भक्ति, विश्वास तथा श्रद्धा-सत्कार-सेवित जप के द्वारा अनुभव कर सकते हैं।

जप तीन प्रकार का होता है—मानसिक, उपांशु तथा वैखरी। मानसिक उपांशु से अधिक प्रभावशाली है।

ठीक चार बजे ब्राह्ममुहूर्त्त में उठ कर दो घण्टे जप करो। ब्राह्ममुहूर्त्त जप तथा ध्यान के लिए अत्यन्त उपयुक्त समय है।

यदि तुम स्नान नहीं कर सको तो अपने हाथ, पैर और मुँह को धो कर जप के लिए बैठ जाओ।

कम्बल, कुशासन अथवा मृगचर्म पर बैठो। उसके ऊपर कोई वस्त्र बिछा लो। इससे शरीर की विद्युत्-शक्ति सुरक्षित रहती है।

जप प्रारम्भ करने से पूर्व कोई प्रार्थना अवश्य करनी चाहिए।

अचल और स्थिर आसन में बैठो। तुममें इतनी शक्ति होनी चाहिए कि तुम लगातार तीन घण्टों तक पद्म, सिद्ध अथवा सुख आसन पर बैठ सको।

जब तुम मन्त्रोच्चारण करते हो तो ऐसा अनुभव करो कि ईश्वर तुम्हारे हृदय-पटल पर आसीन हैं और उनकी पवित्रता

तुम्हारे चित्त की ओर प्रवाहित होती जा रही है। यह भावना भी तुम्हारे हृदय में अवतरित हो जानी चाहिए कि मन्त्र तुम्हारे अन्तःकरण को स्वच्छ करता जा रहा है, वासनाओं और दुर्विचारों का दमन करता जा रहा है।

जप में वैसा उतावलापन नहीं होना चाहिए जैसे कि ठेकेदार अपने काम को जल्दी-से-जल्दी निपटा लेना चाहता है। जप धीरे-धीरे, भाव-सहित और एकाग्रचित्त और भक्तिपूर्वक करो।

मन्त्र का शुद्ध उच्चारण करो। उच्चारण में बिलकुल अशुद्धि नहीं होनी चाहिए। मन्त्र का उच्चारण न तो जल्दी-जल्दी करो और न एकदम ढिलाई से।

माला फेरते समय तर्जनी अँगुली का प्रयोग नहीं करना चाहिए। केवल अँगूठा, मध्यमा अँगुली तथा अनामिका का ही प्रयोग करना चाहिए। एक माला समाप्त हो जाने पर फिर माला को फिरा लो, सुमेरु के दाने को पार नहीं करना चाहिए। जप करते समय हाथों को किसी वस्त्र या गोमुखी के अन्दर ढाँक लेना चाहिए।

जप ध्यानपूर्वक करना चाहिए। जप करते समय तुम्हें बिलकुल एकाग्रचित्त होना चाहिए। जब तुम्हें निद्रा सताने लगे तो खड़े हो कर जपना आरम्भ कर दो।

तुम्हें अपने मन में यह निश्चय कर लेना चाहिए कि बिना निश्चित संख्या में जप समाप्त किये आसन से हिलेंगे भी नहीं। माला अन्तःकरण को ईश्वर की ओर उन्मुख करने के लिए अंकुश के समान है। जिस प्रकार तुम अंकुश द्वारा हाथी को

जिधर चाहो, उधर घुमा सकते हो, उसी प्रकार माला तुम्हारे अन्तःकरण को भी ईश्वर की ओर उन्मुख कर सकती है।

कभी-कभी बिना माला के भी जप करना चाहिए। ऐसे समय में माला के स्थान पर घड़ी का प्रयोग किया जा सकता है। घड़ी में समय देख कर, निश्चित समय तक जप करने का पक्का विचार कर लो।

जप के साथ-साथ ध्यान का भी अभ्यास करो। इसे जप-सहित ध्यान कहा जाता है। धीरे-धीरे जप स्वयं ही ध्यान में परिणत हो जायगा। इसे जप-रहित ध्यान कहा जाता है। प्रतिदिन चार बार जप के लिए बैठना चाहिए। प्रातःकाल के समय, दोपहर को, सन्ध्या तथा रात को जप के लिए आसन लगाना चाहिए।

भगवान् विष्णु के भक्तों को 'ओ३म् नमो नारायणाय', शिवजी के भक्तों को 'ओ३म् नमः शिवाय,' कृष्ण के भक्तों को 'ओ३म् नमो भगवते वासुदेवाय,' श्रीराम जी के भक्तों को 'श्रीरामाय नमः' अथवा 'श्री राम जय राम जय जय राम,' देवी के भक्तों को गायत्री-मन्त्र अथवा दुर्गा-मन्त्र का जप करना चाहिए। केवल एक ही मन्त्र का जप करने तथा उसकी सिद्धि के लिए निश्चय कर लेना चाहिए। राम, शिव, दुर्गा, गायत्री तथा प्रत्येक देव में श्रीकृष्ण भगवान् के ही दर्शन करो, अर्थात् सभी देवताओं में उस परमेश्वर का साक्षात्कार करो, जो भक्तों के हित के लिए भूमि पर साकार रूप धारण करता है।

जप-साधना में नियमितता बिलकुल अनिवार्य है। प्रति-दिन उसी स्थान पर और उसी समय जप करना चाहिए, जिसका एक बार निश्चय कर लिया गया है। पुरश्चरण में

मन्त्र के प्रत्येक अक्षर के लिए एक लाख वार जप करना चाहिए। यदि पूरा मन्त्र पाँच अक्षरों का है तो उस मन्त्र का पाँच लाख वार जप करना पुरश्चरण हुआ।

जप हमारे स्वभाव का एक अङ्ग ही हो जाना चाहिए। यहाँ तक कि स्वप्न में भी जप करते रहना चाहिए।

ईश्वर-साक्षात्कार करने के जितने भी साधन शास्त्रों ने निर्दिष्ट किये हैं, जप उन सबमें सुगम और अधिक प्रभावप्रद साधन है। यह निश्चयतः भक्त को भगवान् की सन्निधि में पहुँचाता है। यदि जप का अभ्यास सत्कारसेवित और निरन्तर किया जाता रहे तो भक्त को अनेक आश्चर्यजनक सिद्धियाँ भी प्राप्त हो जाती हैं, जिन्हें हठयोगी या राजयोगी अपनी कठिन योग-साधना द्वारा अत्यन्त कष्ट करके प्राप्त करता है।

मनुष्य का कल्याण इसी में है कि वह भगवान् की शरण ग्रहण कर तमाम पाप और ताप से मुक्त हो जाये। नाम और नामी में जरा भी भेद नहीं। भगवान् और भगवन्नाम में भेद है ही कहाँ? नाम-जप भगवान् की सन्निधि में रहना ही तो है।

(५) जप के लिए मन्त्र

१. ॐ श्रीमहागणपतये नमः
२. ॐ नमः शिवाय
३. ॐ नमो नारायणाय
४. हरि ॐ
५. हरिः ॐ तत् सत्
६. हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे
७. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

८. ॐ श्रीकृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय नमः
९. ॐ श्रीराम जय राम जय जय राम
१०. ॐ श्रीरामाय नमः
११. ॐ श्रीसीतारामचन्द्राभ्यां नमः
१२. श्रीराम राम रामेति रमे रामे मनोरमे
सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने ।।
१३. आपदामपहर्त्तारं दातारं सर्वसम्पदाम्
लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम् ।।
१४. आर्तानामार्तिहन्तारं भीतानां भीतिनाशनम्
द्विषदां कालदण्डं तं रामचन्द्रं नमाम्यहम् ।।
१५. रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः ।।
१६. सीताराम ।। राधेश्याम ।। राधेकृष्ण ।।
१७. ॐ श्रीरामः शरणं मम
१८. श्रीकृष्णः शरणं मम
१९. श्रीसीतारामः शरणं मम
२०. ॐ श्रीरामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये
२१. श्रीमन्नारायणचरणौ शरणं प्रपद्ये
२२. सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येयद्व्रतं मम ।।
२३. ॐ श्रीहनूमते नमः
२४. ॐ श्रीसरस्वत्यै नमः
२५. ॐ श्रीकालिकायै नमः
२६. ॐ श्रीदुर्गायै नमः
२७. ॐ श्रीमहालक्ष्म्यै नमः
२८. श्री[illegible] नमः

२९. ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥

३०. ॐ सोऽहम्

३१. ॐ अहं ब्रह्मास्मि

३२. ॐ तत्त्वमसि

३३. ॐ श्रीत्रिपुरसुन्दर्यै नमः

३४. ॐ श्रीबालापरमेश्वर्यै नमः

अथ अष्टाक्षरमन्त्रः

ॐ नमो नारायणाय

अस्य श्रीमन्नारायणाष्टाक्षरमहामन्त्रस्य साध्यो नारायण ऋषिः । दैवी गायत्री छन्दः । श्रीमन्नारायणो देवता । जपे विनियोगः ।

ॐ क्रुद्धोल्काय स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां नमः
ॐ महोल्काय स्वाहा तर्जनीभ्यां नमः
ॐ वीरोल्काय स्वाहा मध्यमाभ्यां नमः
ॐ द्व्युल्काय स्वाहा अनामिकाभ्यां नमः
ॐ ज्ञानोल्काय स्वाहा कनिष्ठिकाभ्यां नमः
ॐ सहस्रोल्काय स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः

इति करन्यासः

ॐ क्रुद्धोल्काय स्वाहा हृदयाय नमः
ॐ महोल्काय स्वाहा शिरसे स्वाहा
ॐ वीरोल्काय स्वाहा शिखायै वषट्
ॐ द्व्युल्काय स्वाहा कवचाय हुँ
ॐ ज्ञानोल्काय स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्
ॐ सहस्रोल्काय स्वाहा अस्त्राय फट्

इत्यङ्गन्यासः

ॐ उद्यत्कोटिदिवाकराभमनिशं शङ्खं गदां पङ्कजं
चक्रं विभ्रतमिन्दिरावसुमतीसंशोभिपार्श्वद्वयम् ।
कोटीराङ्गदहारकुण्डलधरं पीताम्बरं कौस्तुभोद्दीप्तं
विश्वधरं स्ववक्षसि लसच्छ्रीवत्सचिह्नं भजे ॥

इति ध्यानम्

अथ द्वादशाक्षरमन्त्रः

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

अस्य श्रीद्वादशाक्षरमहामन्त्रस्य प्रजापतिः ऋषिः । गायत्री छन्दः । वासुदेवः परमात्मा देवता । जपे विनियोगः ।

ओ३म् नमो नमोऽङ्गुष्ठाभ्यां नमः
ओ३म् भगवते नमस्तर्जनीभ्यां नमः
ओ३म् वासुदेवाय नमो मध्यमाभ्यां नमः
ओ३म् नमो नमोऽनामिकाभ्यां नमः
ओ३म् ॐ भगवते नमः कनिष्ठिकाभ्यां नमः
ओ३म् वासुदेवाय नमः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः

इति करन्यासः

ओ३म् नमो नमो हृदयाय नमः
ओ३म् भगवते नमः शिरसे स्वाहा
ओ३म् वासुदेवाय नमः शिखायै वषट्
ओ३म् नमो नमः कवचाय हुँ
ओ३म् भगवते नमो नेत्रत्रयाय वौषट्
ओ३म् वासुदेवाय नमोऽस्त्राय फट्

इत्यङ्गन्यासः

ओ३म् विष्णुं शारदचन्द्रकोटिसदृशं शङ्खं रथाङ्गं
गदामम्भोजं दधतं सिताब्जनिलयं कान्त्या जगन्मोहनम् ।

आवद्धाङ्गदहारकुण्डलमहामौलिं स्फुरत्कङ्कणं
श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं वन्दे मुनीन्द्रैः स्तुतम् ॥

इति ध्यानम्

अथ शिवपञ्चाक्षरमन्त्रः

ॐ नमः शिवाय

अस्य श्रीशिवपञ्चाक्षरीमहामन्त्रस्य वामदेव ऋषिः। पंक्तिश्छन्दः। ईशानो (वामदेवो) देवता। ॐ वीजम्। नमः शक्तिः। शिवायेति कीलकम्। जपे विनियोगः।

ॐ ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः
ॐ नं तर्जनीभ्यां नमः
ॐ मं मध्यमाभ्यां नमः
ॐ शिं अनामिकाभ्यां नमः
ॐ वां कनिष्ठिकाभ्यां नमः
ॐ यं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः

इति करन्यासः

ॐ ॐ हृदयाय नमः
ॐ नं शिरसे स्वाहा
ॐ मं शिखायै वषट्
ॐ शिं कवचाय हुँ
ॐ वां नेत्रत्रयाय वौषट्
ॐ यं अस्त्राय फट

इत्यङ्गन्यासः

ओ३म् ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।

पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्ति वसानं
विश्वाद्यं विश्ववीजं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ॥

इति ध्यानम्

विविध गायत्री-मन्त्र

गणेश-गायत्री (१)

१. ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि । तन्नो दन्ती प्रचोदयात् ॥

गणेश-गायत्री (२)

२. ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि । तन्नो दन्ती प्रचोदयात् ॥

ब्रह्मा-गायत्री (१)

३. ॐ वेदात्मने विद्महे हिरण्यगर्भाय धीमहि । तन्नो ब्रह्मा प्रचोदयात् ॥

ब्रह्मा-गायत्री (२)

४. ॐ चतुर्मुखाय विद्महे कमण्डलुधराय धीमहि । तन्नो ब्रह्मा प्रचोदयात् ॥

विष्णु-गायत्री

५. ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि । तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥

नृसिंह-गायत्री (१)

६. ॐ वज्रनखाय विद्महे तीक्ष्णदंष्ट्राय धीमहि । तन्नो नृसिंहः प्रचोदयात् ॥

नृसिंह-गायत्री (२)

७. ॐ नृसिंहाय विद्महे वज्रनखाय धीमहि । तन्नः सिंहः प्रचोदयात् ॥

गरुड-गायत्री

८. ॐ तत्पुरुषाय विद्महे सुवर्णपक्षाय धीमहि । तन्नो गरुडः प्रचोदयात् ॥

रुद्र-गायत्री (१)

९. ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥

रुद्र-गायत्री (२)

१०. ॐ तत्पुरुषाय विद्महे सहस्राक्षाय महादेवाय धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥

नन्दिकेश्वर-गायत्री

११. ॐ तत्पुरुषाय विद्महे नन्दिकेश्वराय धीमहि । तन्नो वृषभः प्रचोदयात् ॥

षण्मुख-गायत्री (१)

१२. ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महासेनाय धीमहि । तन्नः स्कन्दः प्रचोदयात् ॥

षण्मुख-गायत्री (२)

१३. ॐ षण्मुखाय विद्महे महासेनाय धीमहि । तन्नः षष्ठः प्रचोदयात् ॥

सूर्य-गायत्री

१४. ॐ भास्कराय विद्महे महाद्युतिकराय धीमहि । तन्नः आदित्यः प्रचोदयात् ॥

सूर्य-गायत्री (२)

१५. ॐ आदित्याय विद्महे सहस्रकिरणाय धीमहि। तन्नो भानुः प्रचोदयात् ॥

सूर्य-गायत्री (३)

१६. ॐ प्रभाकराय विद्महे दिवाकराय धीमहि। तन्नः सूर्यः प्रचोदयात् ॥

दुर्गा-गायत्री (१)

१७. ॐ कात्यायन्यै विद्महे कन्याकुमार्यै धीमहि। तन्नो दुर्गा प्रचोदयात् ॥

दुर्गा-गायत्री (२)

१८. ॐ महाशूलिन्यै विद्महे महादुर्गायै धीमहि। तन्नो भगवती प्रचोदयात्।

राम-गायत्री

१९. ॐ रघुवंशाय विद्महे सीतावल्लभाय धीमहि। तन्नो रामः प्रचोदयात् ॥

हनूमान्-गायत्री

२०. ॐ आञ्जनेयाय विद्महे वायुपुत्राय धीमहि। तन्नो हनूमान् प्रचोदयात् ॥

कृष्ण-गायत्री

२१. ॐ देवकीनन्दनाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नः कृष्णः प्रचोदयात् ॥

गोपाल-गायत्री

२२. ॐ गोपालाय विद्महे गोपीजनवल्लभाय धीमहि। तन्नो गोपालः प्रचोदयात् ॥

परशुराम-गायत्री

२३. ॐ जामदग्न्याय विद्महे महावीराय धीमहि। तन्नः परशुरामः प्रचोदयात् ॥

दक्षिणामूर्त्ति-गायत्री

२४. ॐ दक्षिणामूर्त्तये विद्महे ध्यानस्थाय धीमहि। तन्नो धीशः प्रचोदयात् ॥

गुरु-गायत्री

२५. ॐ गुरुदेवाय विद्महे परब्रह्मणे धीमहि। तन्नो गुरुः प्रचोदयात् ॥

हंस-गायत्री (१)

२६. ॐ हंसाय विद्महे परमहंसाय धीमहि। तन्नो हंसः प्रचोदयात् ॥

हंस-गायत्री (२)

२७. ॐ परमहंसाय विद्महे महातत्त्वाय धीमहि। तन्नो हंसः प्रचोदयात् ॥

हयग्रीव-गायत्री

२८. ॐ वागीश्वराय विद्महे हयग्रीवाय धीमहि। तन्नो हंसः प्रचोदयात् ॥

तान्त्रिक- (ब्रह्म-) गायत्री

२९. ॐ परमेश्वराय विद्महे परतत्त्वाय धीमहि। तन्नो ब्रह्म प्रचोदयात् ॥

सरस्वती-गायत्री

३०. ॐवाग्देव्यै च विद्महे कामराजाय धीमहि। तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥

लक्ष्मी-गायत्री

३१. ॐ महादेव्यै च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि ।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥

शक्ति-गायत्री

३२. ॐ सर्वसम्मोहिन्यै विद्महे विश्वजनन्यै धीमहि ।
तन्नः शक्तिः प्रचोदयात् ॥

अन्नपूर्णा-गायत्री

३३. ॐ भगवत्यै च विद्महे महेश्वर्यै च धीमहि ।
तन्नोऽन्नपूर्णा प्रचोदयात् ॥

कालिका-गायत्री

३४. ॐ कालिकायै च विद्महे श्मशानवासिन्यै धीमहि ।
तन्नोऽघोरा प्रचोदयात् ॥

अनुष्टुभ मन्त्र

नृसिंह-मन्त्र

१. ॐ उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं विश्वतोमुखम् ।
नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम् ॥

राम-मन्त्र

२. ॐ रामभद्र महेष्वास रघुवीर नृपोत्तम ।
भो दशास्यान्तकास्माकं रक्षां कुरु श्रियं च मे ॥

कृष्ण-मन्त्र

(१)

३. ॐ कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने ।
प्रणतक्लेशनाशाय गोविन्दाय नमो नमः ॥

(२)

४. ॐ कृष्णाय वासुदेवाय देवकीनन्दनाय च ।
नन्दगोपकुमाराय गोविन्दाय नमो नमः ॥

(३)

५. ॐ कृष्णाय यादवेन्द्राय ज्ञानमुद्राय योगिने ।
नाथाय रुक्मिणीशाय नमो वेदान्तवेदिने ॥

(४)

६. ॐ वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् ।
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्‌गुरुम् ॥

हयग्रीव-मन्त्र

७. ॐ ऋग्यजुःसामरूपाय वेदाहरणकर्मणे ।
प्रणवोद्‌गीतवपुषे महाश्वशिरसे नमः ॥

आत्म-समर्पण मन्त्र

ॐ नमोऽस्तु ते महायोगिन् प्रपन्नमनुशाधि माम् ।
यथा त्वच्चरणाम्भोजे रतिः स्यादनपायिनी ॥

(६) मन्त्रों की महिमा

एक मन्त्र को स्वयं दिव्य शक्ति-समन्वित समझना चाहिए। वास्तव में मन्त्र तथा उसका देवता अभिन्न हैं। नाम और नामी एक ही हैं। मन्त्र ही देवता है। मन्त्र दिव्य शक्ति का प्रतीक है। श्रद्धा, विश्वास तथा भक्ति के साथ मन्त्र का निरन्तर जप करने से साधक की शक्ति का विकास होता है और मन्त्र में मन्त्र-चैतन्य का जागरण होता है और साधक को मन्त्र-सिद्धि प्राप्त हो जाती है, तथा साधक एवं अमर के प्रकाश, स्वतन्त्रता,

शान्ति तथा अनन्त आनन्द और अमरत्व का अनुभव करने लगता है।

मन्त्र के निरन्तर जप करते रहने से साधक में भी वे शक्तियाँ और गुण विकसित होने लगते हैं, जो उस मन्त्र के देवता में होते हैं। सूर्य-मन्त्र का जप आरोग्य, चिरायु, शक्ति, तेज तथा बुद्धि प्रदान करता है। वह शरीर के सब रोगों को दूर करता है, मुख्यतः नेत्रों के रोगों के लिए तो वह रामबाण है। सूर्य के जप करने वाले को उसका कोई शत्रु हानि नहीं पहुँचा सकता। प्रातःकाल आदित्य-हृदय का जप वहुत ही अधिक लाभदायक होता है। श्रीरामचन्द्र जी ने इसी मन्त्र के द्वारा रावण को पराजित किया था। अगस्त्य मुनि ने यह मन्त्र मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी को सिखाया था।

वास्तव में मन्त्र देवता की प्रार्थना अथवा उसके गुणगान करने का एक रूप है, एक उपाय है, जिसके द्वारा हम ईश्वर से कृपा तथा रक्षा की प्रार्थना करते हैं। कुछ मन्त्रों से आत्माओं को वश में किया जा सकता है। लय-सहित ध्वनि की लहरें रूपों का निर्माण करती हैं। अतः विशेष मन्त्र का जप उसके विशिष्ट देवता का रूप निर्माण करता है।

'ओ३म् श्रीसरस्वत्यै नमः' मन्त्र का जप, जो सरस्वतीजी का मन्त्र है, जप करने वाले में बुद्धि तथा विवेक-शक्ति का अभ्युदय करता है और उसको विद्वान् वनाता है। इस जप से तुम्हें प्रेरणा मिलेगी और तुम कविताएँ लिखने लगोगे। तुम एक महान् विद्वान् हो जाओगे। 'ओ३म् श्रीमहालक्ष्म्यै नमः' मन्त्र का जप तुम्हारी निर्धनता को दूर करके तुम्हें धनवान् बना देगा। गणेश-मन्त्र तुम्हारे किसी भी कार्य की वाधाओं का निराकरण कर देगा और तुम उस कार्य को करने में सफल

बनोगे। गणेश-मन्त्र भी तुम्हें बुद्धि, सिद्धि सभी कुछ प्रदान करेगा। महामृत्युञ्जय-मन्त्र का जप दुर्घटनाओं को रोकेगा, असाध्य रोगों का परिहार करेगा। तुम्हें कष्टों से सुरक्षित रखेगा और तुम्हें चिरायु और अमरत्व प्रदान करेगा। महामृत्युञ्जय-मन्त्र का जप मोक्षदाता भी है। जो लोग इस मन्त्र का प्रतिदिन जप करते हैं, वे नीरोग होते और चिरायु का आनन्द भोगते हैं और अन्ततोगत्वा मोक्ष की प्राप्ति करते हैं। "हम त्रिनेत्र शिव को प्रणाम करते हैं, जो प्राणियों को पालता है और मृदु सुगन्धि से परिपूर्ण है। वही शिव हमें आवागमन से वैसे ही छुटकारा प्रदान करे, जैसे पका हुआ खीरा स्वतः ही लता से अलग हो जाता है; और मैं अमरत्व में स्थित हो जाऊँ।" महामृत्युञ्जय-मन्त्र के जप का यही अर्थ है।

"ओ३म् श्रीशरवणभवाय नमः" श्री सुब्रह्मण्य का जप-मन्त्र है। यह तुम्हें प्रत्येक कार्य में सफलता प्रदान करेगा और तुम्हें ऐश्वर्यवान् बनायेगा। यह बुरे प्रभावों और बुरी आत्माओं को तुमसे दूर रखेगा। श्री हनुमान् जी का मन्त्र 'ओ३म् श्री-हनुमते नमः' तुम्हें शक्ति और विजय प्रदान करेगा। पञ्च-दशाक्षर और षोडशाक्षर मन्त्र तुम्हें धन, शक्ति, स्वतन्त्रता इत्यादि का वरदान देंगे। तुम जो-कुछ चाहते हो वह सभी-कुछ तुम्हें देगा। तुम्हें यह विद्या केवल गुरुमुख से सीखनी चाहिए।

गायत्री-मन्त्र या प्रणव-मन्त्र अथवा 'ओ३म् नमः शिवाय' अथवा 'ओ३म् नमो नारायणाय' अथवा 'ओ३म् नमो भगवते वासुदेवाय' का जप अगर भाव, श्रद्धा, प्रेम तथा विश्वास-सहित सवा लाख किया जाय तो मन्त्र-सिद्धि प्राप्त होगी।

'ओ३म्', 'सोऽहम्', 'शिवोऽहम्' तथा 'अहं ब्रह्मास्मि' मोक्ष-

मन्त्र हैं। यह मन्त्र आत्मसाक्षात्कार कराने में तुम्हारी सहायता करेंगे। 'ओ३म् श्रीरामाय नमः', ओ३म् नमो भगवते वासुदेवाय' सगुण मन्त्र हैं, जो तुम्हें सगुण का साक्षात्कार करा देंगे और अन्त में निर्गुण का।

बिच्छू और साँप के काटे को ठीक करने के लिए मन्त्र-सिद्धि प्राप्त करने के लिए ग्रहण के दिनों में मन्त्र का जप करना चाहिए। इससे जल्दी ही मन्त्र-सिद्धि प्राप्त होती है। तुम्हें पानी के अन्दर खड़े होकर मन्त्र का जाप करना चाहिए। यह अधिक प्रभावोत्पादक होता है। मन्त्र-सिद्धि प्राप्त करने के लिए साधारण दिनों में भी इस मन्त्र का जप किया जा सकता है।

साँप, बिच्छू आदि के काटे को ठीक करने के लिए चालीस दिन में मन्त्र-सिद्धि प्राप्त हो सकती है। नियमपूर्वक प्रतिदिन मन्त्र को भक्ति और विश्वास के साथ जपो। प्रातःकाल स्नानान्तर जप करने के लिए बैठ जाओ। चालीस दिन तक ब्रह्मचर्य का पालन करो और या तो केवल दूध और फल पर रहो अथवा अत्यन्त विधानानुकूल और सात्त्विक आहार ग्रहण करो।

मन्त्रों द्वारा दीर्घकालीन रोगों का उपचार भी किया जा सकता है। मन्त्रों का सङ्गीत-रूप में उच्चारण करने से महाप्रभावशाली स्फुरण उत्पन्न होते हैं, जिनके द्वारा अनेक रोगों का उपचार किया जाता है। यह उपचार-प्रणाली आजकल पश्चिम में उचित स्थान पा चुकी है। इसे मैलोथिरैपी कहा जाता है। हमारे शरीर-कोष में पवित्र सत्त्व अथवा दिव्य शक्ति ओतप्रोत कर देते हैं। वे जीवाणु अथवा सूक्ष्म जीवों

का नाश कर शरीर-कोष और स्नायुमण्डल को स्वच्छ बना देते हैं। यह मन्त्र श्रेष्ठ तथा चित्त में पवित्रता लाने के लिए उत्तम माध्यम है। शक्तिवर्द्धक विटामिन्स् से यह अधिक शक्तिपूर्ण है। वे अल्ट्रावायोलेट किरणों से भी अधिक प्रभावशाली हैं।

मन्त्र-सिद्धि का दुरुपयोग नहीं होना चाहिए, अर्थात् इसके द्वारा दूसरों को हानि नहीं पहुँचानी चाहिए। जो लोग मन्त्र की शक्ति को दूसरों के नाश में प्रयुक्त करते है, वे स्वयं ही अन्त में नाश को प्राप्त हो जाते हैं।

जो लोग साँप, बिच्छू आदि के काटे को और रोगग्रस्त को ठीक करने में मन्त्र का प्रयोग करते हैं, उन्हें किसी प्रकार की फीस नहीं लेनी चाहिए, उन लोगों को बिलकुल निष्काम भाव से यह कार्य करना चाहिए। यह तो परोपकार है। उनको किसी भी प्रकार की भेंट इस काम के बदले में नहीं लेनी चाहिए। यदि वे मन्त्र-सिद्धि का अपने स्वार्थ के लिए प्रयोग करेंगे तो उनकी शक्ति समाप्त हो जायेगी, क्षीण हो जायेगी और फिर उनके पास मन्त्र-शक्ति नही रहेगी। दूसरी ओर यदि वे बिलकुल निष्काम भाव से मानव-जाति की सेवा करेंगे तो भगवान् की कृपा से उनकी शक्ति का विकास होता जायगा।

जिस मनुष्य ने मन्त्र-सिद्धि प्राप्त कर ली है, वह केवल स्पर्श से ही दीर्घकालीन रोग, काले नाग के काटे और बिच्छू के काटे हुए व्यक्ति को ठीक कर सकता है। जब किसी मनुष्य को काले सर्प ने काट लिया हो तो मन्त्र-सिद्ध को तुरन्त तार द्वारा सूचित किया जाता है। मन्त्र-सिद्ध मन्त्र का उच्चारण करता है और जिस मनुष्य को काले साँप ने काटा

है, वह तुरन्त स्वस्थ हो जाता है। क्या ही अद्भुत बात है ? क्या इससे मन्त्र में निहित अनन्त शक्ति नहीं सिद्ध होती ?

मन्त्र की दीक्षा अपने गुरु से लो। अगर गुरु प्राप्त करना कठिन हो तो अपने आराध्य की प्रार्थना करो और उसके विशेष मन्त्र का जप करना आरम्भ कर दो।

मन्त्र-सिद्धि की प्राप्ति से तुम सब मन्त्रयोगी बन सकते हो। मन्त्रों के द्वारा तुम संसार के सच्चे हितकारी बन सकते हो। मन्त्रों के द्वारा संसार के प्रत्येक भाग में प्रभावशाली स्पन्दनों को भेजा जा सकता है।

(७) जप के लिए आवश्यक साधन

अब तुम्हें जपयोग का पूर्ण परिचय मिल चुका है तुम यह भी समझ गये कि ईश्वर के नाम में कितनी अमित शक्ति है। अब इसी क्षण से वास्तविक साधना आरम्भ कर दो। प्रतिदिन की साधना के लिए नीचे कुछ बातें बतायी जा रही हैं:—

१- नियत समय—सबसे उत्तम समय ब्राह्ममुहूर्त्त और गोधूलि की बेला है। उस समय सब-कुछ सत्त्व-प्रधान रहता है। नियमितता का होना अत्यधिक आवश्यक है।

२- नियत स्थान—प्रतिदिन एक ही स्थान पर बैठना बहुत लाभ-दायक है। बार-बार स्थान मत बदलो।

३- स्थिर आसन—एक सुखपूर्वक आसन साधक के चित्त को स्थिर करने में सहायक होता है।

४- उत्तर या पूर्व की ओर—दिशा का भी पूर्ण प्रभाव पड़ता है। जपयोग में इससे आशातीत सहायता मिलती है।

५- आसन—मृगचर्म या कुशासन अथवा कम्बल का प्रयोग करना चाहिए। इससे शरीर की विद्युत्-शक्ति सुरक्षित रहती है।

६- पवित्र प्रार्थना—जप से पूर्व अपने इष्टदेवता की प्रार्थना साधक में सात्त्विक भाव उत्पन्न करती है।

७- शुद्ध उच्चारण—जप करते समय उच्चारण स्पष्ट तथा शुद्ध होना चाहिए।

८- सतर्कता—यह अत्यन्त आवश्यक गुण है। जब तुम जप आरम्भ करते हो, तब तुम एकदम ताजे और सावधान रहते हो, पर कुछ समय पश्चात् तुम्हारा चित्त चञ्चल हो कर इधर-उधर भागने लगता है, निद्रा तुम्हें घर दबाने लगती है। अतः जप करते समय इस बात से सतर्क रहा करो।

९- जप-माला—माला के प्रयोग से साधक सदा सजग रहता है और माला जप को जारी रखने के लिए एक उत्तेजक साधन का काम करती है। अपने मन में इस बात का पक्का विचार कर लो कि माला की एक नियत संख्या समाप्त करके ही उठोगे।

१०- जप के प्रकार—रुचि बनाये रखने के लिए और थकावट को दूर करने के लिए यह आवश्यक है कि जप के कई प्रकारों का प्रयोग करते रहो। एक बार जोर से मन्त्र का उच्चारण करो और फिर मन्त्र को गुनगुनाओ और इसके बाद मानसिक जप करो।

११- ध्यान—जब तुम जप करते हो तो साथ-साथ ईश्वर का

ध्यान भी करो और ऐसा समझो कि उसका मनोहर स्वरूप तुम्हारे सम्मुख ही है। इस अभ्यास से तुम्हारी साधना सुदृढ़ बनेगी और तुम सत्वर ही उस परमेश्वर से साक्षात्कार करोगे।

१२-शान्ति-पाठ—यह भी बहुत आवश्यक है कि जब जप समाप्त हो जाता है तो तुरन्त ही स्थान को छोड़ कर अपने सांसारिक कार्यों में मत लग जाओ और दूसरे लोगों से तुरन्त ही जाकर मत मिलो। जप के पश्चात् कम-से-कम लगभग दस मिनट तक चुपचाप बैठे रहो और कुछ प्रार्थना गाते रहो। तत्पश्चात् भक्तिपूर्वक दण्डवत् प्रणाम करो। अब तुम स्थान छोड़ कर अपने दैनिक कार्य कर सकते हो। आध्यात्मिक स्पन्दन निरन्तर तुम्हारा साथ देते रहेंगे।

तुम अपनी साधना शान्तिपूर्वक, दृढ़ता और सहिष्णुतापूर्वक निरन्तर जारी रखो और इस प्रकार अपने जीवन के उद्देश्य को प्राप्त कर नित्यानन्द को प्राप्त करो।

(८) जप के लिए नियम

१- कोई भी मन्त्र अथवा ईश्वर का नाम चुन लो और उसका नित्य प्रति १०८ से १०८० बार तक अर्थात् एक माला से लेकर दस माला तक जप करो,। अच्छा है कि यह मन्त्र तुम अपने गुरु-मुख से लो।

२- १०८ दानों की रुद्राक्ष अथवा तुलसी की माला का प्रयोग करो।

३- मनके को फेरने के लिए दाहिने हाथ की मध्यमा तथा अँगूठे का प्रयोग करो। तर्जनी का प्रयोग निषिद्ध है।

४- माला को नाभि से नीचे नहीं लटकने देना चाहिए। हाथ को या तो दिल के पास या नाक के पास रखो।

५- माला न तो दिखायी देनी चाहिए और न जमीन पर ही लटकी रहनी चाहिए। माला को या तो वस्त्र से या तौलिए से ढक लो। लेकिन यह वस्त्र या तौलिया स्वच्छ होना चाहिए और प्रतिदिन उसे धो डालना चाहिए।

६- जब तुम माला के मनके फेरते हो तो माला की सुमरनी अथवा मेरु को पार मत करो। जब तुम्हारी अंगुलियाँ मेरु के पास आ जाती हैं, तब तुरन्त वापस लौट चलना चाहिए और उसी अन्तिम मनके से पुनः माला फेरना आरम्भ कर दो।

७- कुछ समय तक मानसिक जप करो। यदि मन चञ्चल हो जाता है तो जप गुनगुनाते हुए आरम्भ कर दो। फिर जोर-जोर से जप आरम्भ करो। इसके बाद फिर मानसिक जप जितनी जल्दी हो सके, करना आरम्भ कर दो।

८-- प्रातःकाल जप के लिए बैठने से पूर्व या तो स्नान कर लो, या हाथ-पैर-मुँह धो डालो। दोपहर या सन्ध्या के समय यह करना आवश्यक नहीं है, पर यदि सम्भव हो तो हाथ-पैर आदि अवश्य धो डालने चाहिए। जब भी तुम्हें खाली समय मिले, तब भी जप करते रहो। मुख्य रूप से प्रातःकाल, दोपहर तथा सन्ध्या और रात को सोने से पूर्व जप अवश्य करना चाहिए।

९- जप के साथ में या तो अपने आराध्य का ध्यान करो या प्राणायाम करो। अपने आराध्य का चित्र अथवा प्रतिमा

अपने समक्ष रखो। जब-जब तुम जप करते हो, तब मन्त्र के अर्थ पर विचार किया करो।

१०-मन्त्र के प्रत्येक अक्षर का ठीक से सही-सही उच्चारण किया करो; न तो बहुत जल्दी और न बहुत धीरे ही। जब तुम्हारा मन चञ्चल हो जाय तो अपनी जप की प्रगति को तेज कर दो।

११-जप के समय मौन धारण करो और इस समय अपने सांसारिक कार्यों से कोई सम्बन्ध न रखो।

१२-पूर्व अथवा उत्तर की ओर मुँह करके जहाँ तक हो, प्रतिदिन एक ही स्थान पर जप के लिए आसन लगाओ। मन्दिर, नदी का किनारा या बरगद अथवा पीपल के वृक्ष के नीचे का स्थान जप करने के लिए उपयुक्त स्थान है।

१३-जब तुम जप करते हो तो भगवान् से कोई सांसारिक वस्तु के लिए याचना न करो। ऐसा अनुभव करो कि भगवान् की अनुकम्पा से तुम्हारा हृदय निर्मल होता जा रहा है और चित्त सुदृढ़ बन रहा है।

१४-अपना गुरुमन्त्र सबके सामने प्रकाशित न करो।

१५-जब तुम अपने कार्य करते हो, तब भी मन में जप करते रहो।

(६) गायत्री-मन्त्र

ओ३म्। भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं। भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।

ओ३म् —परब्रह्म का अभिवाच्य शब्द
भूः —भूलोक
भुवः —अन्तरिक्ष लोक
स्वः —स्वर्गलोक
तत् —परमात्मा अथवा ब्रह्म
सवितुः —ईश्वर अथवा सृष्टिकर्त्ता
वरेण्यं —पूजनीय
भर्गः —अज्ञान तथा पाप-निवारक
देवस्य —ज्ञानस्वरूप भगवान् का
धीमहि —हम ध्यान करते हैं
धियो —बुद्धि, प्रज्ञा
यः --जो
नः --हमारा
प्रचोदयात् --प्रकाशित करे।

अर्थ—हम उस महिमामय ईश्वर का ध्यान करते हैं, जिसने इस संसार को उत्पन्न किया है, जो पूजनीय है, जो ज्ञान का भण्डार है, जो पापों तथा अज्ञान को दूर करने वाला है—वह हमें प्रकाश दिखाये और हमें सत्पथ पर ले जाये।

वह प्रकाश क्या है ? अभी तुममें देहाध्यास है तथा ऐसी बुद्धि है, जिससे तुम यह समझते हो कि यह शरीर ही तुम्हारा अपना है। आत्मा को कोई महत्त्व नहीं देते। अब तुम वेदों की माता गायत्री से प्रार्थना कर रहे हो कि वह तुम्हें शुद्ध, सत्त्व बुद्धि दे, जो तुम्हें 'अहं ब्रह्मास्मि' का बोध कराने में समर्थ हो। 'अहं ब्रह्मास्मि' का अर्थ है कि मैं ब्रह्म हूँ। गायत्री का यह अद्वैत-अभिवाचक अर्थ है। योग के मार्ग में अनुभवी लोग

यह अर्थ लगा सकते हैं—मैं प्रकाशों में वह श्रेष्ठ प्रकाश हूँ, जो बुद्धि को प्रकाशित करता है।

गायत्री-मन्त्र में नौ नाम हैं, जैसे (१) ओ३म्, (२) भूः, (३) भुवः, (४) स्वः, (५) तत्, (६) सवितुः, (७) वरेण्यं, (८) भर्गः तथा (९) देवस्य। इन नौ नामों द्वारा ईश्वर की प्रशंसा होती है। धीमहि ईश्वर की पूजा अथवा ध्यान की ओर सङ्केत करता है। धियो यो नः प्रचोदयात्—यह प्रार्थना है। यहाँ पाँच स्थानों पर विश्राम है। 'ओ३म्' पर प्रथम विश्राम, 'भूर्भुवः स्वः' पर द्वितीय विश्राम, 'तत्सवितुर्वरेण्यं' पर तृतीय विश्राम, 'भर्गो देवस्य धीमहि' पर चतुर्थ विश्राम, 'धियो यो नः प्रचोदयात्' पर पञ्चम विश्राम। जब तुम इस मन्त्र का जप करते हो तो इनमें से प्रत्येक विश्राम पर थोड़ा रुकना चाहिए।

गायत्री-मन्त्र का देवता सविता है, अग्नि उसका मुख है, विश्वामित्र उसके ऋषि हैं और गायत्री उसका छन्द है। इस मन्त्र का उच्चारण यज्ञोपवीत-संस्कार, प्राणायाम और जप आदि के समय किया जाता है। गायत्री क्या है? वही जो सन्ध्या कहलाती है। और सन्ध्या क्या है, वही जो गायत्री है। इस प्रकार गायत्री और सन्ध्या दोनों एक ही चीज हैं। जो गायत्री का ध्यान करता है, वास्तव में वह विष्णु भगवान् का ध्यान करता है। विष्णु भगवान् संसार के देवता हैं।

मनुष्य गायत्री-मन्त्र का हर समय यहाँ तक कि लेटते, बैठते, चलते मानसिक जप कर सकता है। इसके जप में किसी नियम का बन्धन नहीं है, जिसके न पालन करने से कोई पाप हो। इस प्रकार हमें दिन में तीन बार सुबह, दोपहर तथा शाम को गायत्री-मन्त्र द्वारा सन्ध्या-वन्दन करना चाहिए। केवल एक गायत्री-मन्त्र ही ऐसा है, जिसको सब हिन्दू जप सकते हैं,

चाहे वह किसी भी देवता का उपासक हो। वेदों में भगवान् का कहना है: एक मन्त्र सभी के लिए होना चाहिए— 'समानो मन्त्रः।' अतः गायत्री एक ऐसा मन्त्र है, जो सभी हिन्दुओं के लिए उपयुक्त है। उपनिषदों की गोपनीय विद्या चारों वेदों का सार है, जब कि तीनों व्याहृतियों-सहित गायत्री-मन्त्र उपनिषदों का सार है। जो मनुष्य इस रूप में गायत्री-मन्त्र को जानता और समझता है, वह वास्तविक ब्राह्मण है। इस ज्ञान के बिना वह शूद्र है, चाहे वह चारों वेदों का ज्ञाता ही क्यों न हो।

गायत्री-मन्त्र-जप से लाभ

गायत्री वेदों की माता तथा पापों का नाश करने वाली है। गायत्री से अधिक पवित्र कार्य तीनों लोकों में और कोई भी नहीं है। गायत्री के जप से हमें वही फल प्राप्त होता है, जो वेदाङ्गों-सहित चारों वेदों के पढ़ने से। केवल इस एक मन्त्र का दिन में तीन बार जप करने से भी कल्याण होता है तथा मोक्ष की प्राप्ति होती है। यह वेदों का सबसे महत्त्वशाली मन्त्र है। यह सब पापों का नाश करता है। यह हमें अत्यन्त सुन्दर स्वास्थ्य, सौन्दर्य, शक्ति, जीवन तथा तेज प्रदान करता है।

गायत्री-मन्त्र तीनों पापों का निवारण कर देता है। गायत्री चारों प्रकार के पुरुषार्थों अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को दात्री है। यह अविद्या, काम और कर्म तीनों प्रकार के अज्ञान को दूर भगाती है। गायत्री-मन्त्र हृदय तथा मस्तिष्क को स्वच्छ तथा निष्कलङ्क बनाता है। गायत्री-मन्त्र से उपासक को अष्ट-सिद्धियों की प्राप्ति हो सकती है। गायत्री-मन्त्र मनुष्य को बुद्धिमान् और शक्तिशाली बनाता है। गायत्री-मन्त्र जन्म-मरण के बन्धन से छुटकारा दिलाता है।

गायत्री का जप गायत्री के दर्शन कराता है और अन्ततोगत्वा अद्वैत ब्रह्म का ज्ञान प्रदान करता है अथवा जप करने वाला परब्रह्म से तल्लीनता, तद्रूपता, तन्मयता और तदाकारता का अनुभव करता है। जो साधक प्रारम्भ में ज्ञानरूपी प्रकाश की याचना करता है, वह अन्त में तल्लीनता की अवस्था में पहुँचने पर परमानन्द की अनुभूति करता है--'मैं प्रकाशों का प्रकाश हूँ, जो बुद्धि को प्रकाशित करता है।'

गायत्री वेदों की माता हमें सुबुद्धि, सच्चरित्र, सद्विचार तथा अच्छी समझ प्रदान करे! वह हमें पथ दिखाये, हमें जन्म-मरण के बन्धन से छुड़ाये, आवागमन के चक्कर से बचाये! धन्य है गायत्री, जिसने समस्त संसार को उत्पन्न किया।

गायत्री की महिमा

(मनुस्मृति, अध्याय २)

मनुस्मृति के द्वितीय अध्याय में लिखा है कि ब्रह्मा जी ने तीनों वेदों को दुह कर क्रम से अ, उ और म् अक्षरों को निकाला जिनके योग से प्रणव का प्रादुर्भाव हुआ और जिनके साथ भूः, भुवः और स्वः नामक रहस्यपूर्ण व्याहृति का भी उदय हुआ जिनसे पृथ्वी, आकाश तथा स्वर्ग का बोध होता है।

इसी तरह ब्रह्मा जी ने तीनों वेदों से गायत्री को भी निकाला जिसकी पवित्रता और शक्ति अचिन्त्य है।

यदि कोई द्विजाति एकान्त में प्रणव और व्याहृति-सहित

गायत्री का नित्य १००० जप करेगा तो एक मास में बड़े-से-बड़े पाप से वह ऐसे मुक्त हो जायगा जैसे केंचुल से साँप।

प्रणव, तीनों व्याहृति और त्रिपदा गायत्री मिल कर वेद का मुख या प्रधान अङ्ग हैं।

जो नित्य नियमपूर्वक प्रतिदिन तीन वर्ष तक गायत्री का जप करेंगे उनका शरीर निर्मल हो जायगा और उनके सूक्ष्म शरीर में इतनी गति आ जायेगी कि वे वायु के समान सर्वत्र आ-जा सकेंगे।

तीन अक्षरों से बना प्रणव सर्वशक्तिमान् परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ नाम है। कुम्भक के समय प्रणव का जप करते हुए परमात्मा का ध्यान करना भगवान् की सबसे बड़ी पूजा है; किन्तु गायत्री उससे भी श्रेष्ठ है। मौन की अपेक्षा सत्य श्रेष्ठ है।

वेदों में बतलायी गयी विधियों के पालन के, अग्नि में आहुति देने के तथा अन्य पुण्य कर्मों के फल कभी-न-कभी क्षीण होते ही हैं; किन्तु अक्षर ब्रह्म ॐ का कभी क्षय नहीं होता। जप करते समय मन्त्र के अक्षर धीरे-धीरे शुद्ध उच्चारण करने चाहिए। इच्छानुसार संख्या में पुरश्चरण करना चाहिए।

चारों गार्हस्थ्य अनुष्ठान अपनी भिन्न-भिन्न विधियों के साथ मिल कर भी गायत्री-जप के फल के सोलहवें अंश के बराबर भी नहीं हैं।

केवल गायत्री-जप करने से ही बिना किसी अन्य धार्मिक कृत्य को किये ब्राह्मण वेदों में बतलाये कर्मों के सब फलों को प्राप्त करता है।

छान्दोग्योपनिषद्

'यह सम्पूर्ण सृष्टि गायत्रीमय है। वाणी गायत्री का ही रूप है और वाणी की कृपा से ही सृष्टि की रक्षा होती है। गायत्री के चार चरण हैं और षड्गुणों से युक्त हैं। सारी सृष्टि गायत्री की ही महिमा का रूप है। गायत्री में जिस ब्रह्म की उपासना की गयी है उसी से सारा ब्रह्माण्ड व्याप्त है।'

(अध्याय ३, खण्ड १२)

'मनुष्य यज्ञ का रूप है। उसके जीवन के आरम्भिक २४ वर्ष प्रातः कृत्य के समान हैं। गायत्री में २४ अक्षर हैं जिनसे प्रातः सन्ध्या की उपासना की जाती है।'

(अ० ३, खण्ड १६)

गायत्री-पुरश्चरण

ब्रह्म-गायत्री में २४ अक्षर होते हैं। अतः गायत्री के एक पुरश्चरण में २४ लक्ष गायत्री-मन्त्र का जप करना होता है। पुरश्चरण के अनेक नियम हैं। २४ लक्ष जप जब तक पूरा न हो जाय बराबर नियमपूर्वक ३००० गायत्री का जप किये जाओ। इस तरह अपने मानस-रूपी दर्पण का मल हटा कर आध्यात्मिक बीज बोने के लिए खेत तैयार करो।

महाराष्ट्र के ब्राह्मणों को गायत्री-पुरश्चरण करने में बड़ी रुचि होती है। महाराष्ट्र देश के पूना आदि कई नगरों में ऐसे अनेक सज्जन मिलेंगे जो कई बार गायत्री-पुरश्चरण कर चुके हैं। महामना पं० मदन मोहन मालवीय गायत्री-पुरश्चरण के बड़े भक्त थे। उनके जीवन की सफलता और वाराणसी हिन्दू-

विश्वविद्यालय की स्थापना और उन्नति का रहस्य उनका निरन्तर गायत्री-जप और माता गायत्री की कृपा ही है।

पञ्चदशी नामक संस्कृत के प्रसिद्ध ग्रन्थ-प्रणेता स्वामी विद्यारण्य ने गायत्री के पुरश्चरण किये थे। गायत्री माता ने उनको प्रत्यक्ष दर्शन दिये और वर माँगने के लिए कहा। स्वामी जी ने कहा—'माता, दक्षिण में भारी अकाल पड़ा है। आप इतना सोना बरसावें कि लोगों का कष्ट दूर हो जाय।' गायत्री माता के वर के अनुसार दक्षिण में सोना बरसा। गायत्री-मन्त्र में ऐसी शक्ति है।

शुद्ध मन वाले अथवा योगभ्रष्ट मनुष्यों को एक ही पुरश्चरण करने से गायत्री के दर्शन हो सकते हैं। इस कलिकाल में अधिकांश लोगों के मन कलुषित होते हैं। अतः कलुषता की मात्रानुसार एक से अधिक पुरश्चरणों के करने से सफलता मिलती है। जितना अधिक मन मैला होगा उतने ही पुरश्चरण करने होंगे। प्रसिद्ध स्वामी मधुसूदन सरस्वती ने कृष्ण-मन्त्र के १७ पुरश्चरण किये थे। उन्होंने पूर्व-जन्म में १७ ब्राह्मणों की हत्या की थी इसलिए उन्हें भगवान् कृष्ण के दर्शन न हुए, किन्तु १८ वाँ पुरश्चरण जब आधा ही हुआ था कि उन्हें भगवान् के दर्शन हो गये। यही नियम गायत्री के पुरश्चरण में भी लागू है।

गायत्री-जप के सम्बन्ध में कुछ ज्ञातव्य बातें

१—पुरश्चरण समाप्त हो जाने के उपरान्त हवन करना और ब्राह्मणों, साधुओं और गरीबों को भोजन कराना चाहिए। इससे गायत्री माता प्रसन्न होती हैं।

२--जो लोग पुरश्चरण आरम्भ करें उन्हें केवल दूध और फल पर रहना चाहिए। ऐसा करने से मन सात्त्विक रहता है और आध्यात्मिक उन्नति होती है।

३--मोक्ष प्राप्त करने के लिए जब निष्काम-भाव से जप करना हो तो उसमें किसी तरह नियमों की बाधा नहीं रहती। किसी कामना-विशेष के लिए जब सकाम-भाव से जप किया जाता है तभी विधि और नियमों का पालन करना पड़ता है।

४--गायत्री-पुरश्चरण गङ्गा जी के तट पर पीपल या पञ्च-वृक्ष के नीचे करने से शीघ्र सिद्ध होता है।

५--यदि ४००० गायत्री का जप प्रतिदिन किया जाय तो एक वर्ष सात महीने और पचीस दिनों में एक पुरश्चरण पूरा होता है। यदि जप धीरे-धीरे किया जाय तो दश घण्टों में चार हजार जप हो जायेगा। पुरश्चरण में नित्य एक ही संख्या में जप करना चाहिए।

६--पुरश्चरण-काल में कठोर ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन करना चाहिए। ऐसा करने से ही गायत्री-माता के दर्शन सरलता से हो सकते हैं।

७--पुरश्चरण-काल में अखण्ड मौन-व्रत का पालन करना बड़ा लाभदायक होता है। जो लोग पूरे पुरश्चरण-काल तक अखण्ड मौन का पालन न कर सकें उन्हें महीने में एक सप्ताह अथवा केवल रविवार के दिन मौन-व्रत धारण करना चाहिए।

८--जो गायत्री का पुरश्चरण करे उसे बिना नित्य की जप-संख्या पूरी किये आसन पर से नहीं उठना चाहिए। जिस

आसन से जपने वाला बैठे उसी आसन से समाप्त होते तक बैठे रहना चाहिए।

९—जप की गिनती माला, अँगुली के पोरुओं अथवा घड़ी रख कर करनी चाहिए। एक घण्टे में जितना जप हो उसकी संख्या निर्धारित कर लो। मान लो कि एक घण्टे में तुम ४०० गायत्री जप करते हो तो ४००० जप दश घण्टों में पूरा होगा। घड़ी के सहारे संख्या निर्धारित करने में एकाग्रता शीघ्र आती है।

प्रातः, मध्याह्न और सायङ्काल में गायत्री के ध्यान की आकृतियाँ भिन्न-भिन्न हैं। बहुत से लोग उक्त तीनों में अकेली पाँच मुख वाली गायत्री का ही ध्यान करते हैं।

चतुर्थ अध्याय

साधना-प्रकरण

(१) गुरु की आवश्यकता

गुरु आवश्यक है। आध्यात्मिक मार्ग चारों ओर से कठिनाइयों से आकीर्ण है। गुरु साधक को उचित मार्ग का निदर्शन करा देगा और इससे सब कठिनाइयाँ और विघ्न-बाधाएँ दूर हो जायेंगी।

गुरु, ईश्वर, ब्रह्म, सत्य तथा ओ३म् एक ही हैं। गुरु की सेवा भक्ति-सहित करो। उसको सब प्रकार से प्रसन्न रखो। अपने चित्त को पूर्णतः गुरु की सेवा में लगा दो। उनकी आज्ञा का पालन अटूट विश्वास के साथ करो। गुरुमुख से सुने गये शब्दों में पूर्ण श्रद्धा रखो। तभी तुम अपने में सुधार कर सकोगे। इसके अतिरिक्त और कोई दूसरा उपाय नहीं है।

अपने गुरु की पूजा ईश्वर-भाव से करनी चाहिए। यह भलीभाँति समझ लेना चाहिए कि ईश्वर और ब्रह्म की सभी शक्तियाँ गुरु में ही विद्यमान हैं। गुरु को ईश्वर का ही अव-

तार समझ लेना चाहिए। तुम्हें कभी भी उनके दोषों को नहीं देखना चाहिए। तुम्हें उनमें केवल देवत्व के ही दर्शन करने चाहिए। जब तुम ऐसा करोगे, तभी ब्रह्म की प्राप्ति सम्भव होगी।

धीरे-धीरे गुरु का शारीरिक रूप तिरोभूत हो जायगा और तुम उनके व्यापक होने का अनुभव करोगे। अर्थात् तुम्हें ऐसा लगेगा, जैसे वह समस्त संसार में समाये हैं। फिर क्या है, तुम स्थावर-जङ्गम, जड़-चेतन सभी में गुरु के ही दर्शन करोगे। इसके अतिरिक्त संस्कारों से छुटकारा पाने का कोई दूसरा उपाय नहीं है। केवल गुरु की सेवा के द्वारा ही तुम बन्धनों को तोड़ सकते हो।

जो साधक पूर्ण भक्ति के साथ गुरु की पूजा करता है, वह शीघ्र ही अपने को निर्मल तथा स्वच्छ बना लेता है। यह आत्मशुद्धि का सबसे सरल तथा सबसे अचूक उपाय है।

यदि अपने गुरु से मन्त्र-दीक्षा लेते हो तो बहुत ही अच्छा है। गुरु से प्राप्त किया हुआ मन्त्र साधक पर अद्भुत प्रभाव डालता है। वास्तव में मन्त्र के साथ गुरु अपनी शक्ति भी अपने शिष्य को दे देता है। यदि तुम्हें कोई गुरु नहीं मिलता हो तो अपनी इच्छा और पसन्द के अनुसार कोई भी मन्त्र चुन लो और उसका श्रद्धा तथा भाव-सहित नित्यप्रति जप करो। इससे भी आत्मशुद्धि होगी, ईश्वर के दर्शन होंगे।

(२) ध्यान का कमरा

ध्यान करने का कमरा बिलकुल अलग रहना चाहिए और उसमें ध्यान करने के समय के अतिरिक्त पूरे समय ताला पड़ा

रहे। उस कमरे में किसी को भी नहीं जाना चाहिए। प्रातः-काल और सन्ध्या को उसमें धूप जला दो। उसमें श्रीकृष्ण जी अथवा भगवान् शिव या श्रीराम या देवी का एक चित्र रखो। चित्र के सामने तुम आसन बिछा दो। जब तुम उस कमरे में बैठ कर मन्त्र का जप करोगे, तो जो शक्तिशाली स्पन्दन उससे उठेंगे, वे कमरे के वातावरण में ओतप्रोत हो जायेंगे। छः महीने के अन्दर तुम उस कमरे में शान्ति तथा पवित्रता का अनुभव करोगे। कमरे में एक विशेष प्रकार का सौन्दर्य और चमक प्रतीत होंगे। यदि तुम श्रद्धा और सत्य-भावना-सहित जप करते हो तो तुम वास्तव में ही इस प्रकार का अनुभव करोगे।

जब कभी भी तुम्हारा अन्तःकरण सांसारिक कष्टों से उद्विग्न हो जाय तो उस कमरे में जा कर कम-से-कम आधा घण्टा भगवन्नाम का जप करो। बस तुरन्त ही तुम्हारे मस्तिष्क में पूर्ण परिवर्तन हो जायगा। इसका अभ्यास करो। बस, तुम्हें स्वयं ही शान्तिप्रद आध्यात्मिक प्रभाव का अनुभव होगा। आध्यात्मिक साधना के समान संसार में कोई महान् वस्तु नहीं है। साधना के परिणामस्वरूप मसूरी पहाड़ का आनन्द तुम्हें ध्यान के इस कमरे में ही प्रतीत होगा।

हृदय में श्रद्धा रख कर ईश्वर के नामों का जप करो। तुम तुरन्त ही ईश्वर के सान्निध्य का अनुभव करने लगोगे। इस कराल कलिकाल में ईश्वर-प्राप्ति का यह सबसे सुगम मार्ग है। साधना में नियम होना चाहिए। तुम्हें उसका बड़ा पाबन्द होना चाहिए। ईश्वर किसी भी प्रकार की अमूल्य भेंट नहीं चाहता। बहुत से लोग अस्पताल खुलवाने में और धर्मशालाएँ

आदि बनवाने में सहस्रों रुपए व्यय कर देते हैं; पर वे हृदय से ईश्वर का स्मरण नहीं करते। भक्त के अन्तःकरण में सर्व-व्यापी राम की भावना रहनी चाहिए, भले ही वह स्थूल जगत् में धनुषधारी राम के दर्शन करे। ओ३म् की भाँति राम भी सर्वव्यापकता का अभिवाचक है। ईश्वर को ध्यान द्वारा जाना जा सकता है। उसका हम केवल अनुभव कर सकते हैं। उसको हम जप द्वारा प्राप्त कर सकते हैं।

(३) ब्राह्ममुहूर्त्त

ब्राह्ममुहूर्त्त में प्रातःकाल चार बजे उठो। ब्राह्ममुहूर्त्त का काल आध्यात्मिक साधना के लिए और जप करने के लिए सब-से अच्छा समय है। प्रातःकाल हमारा चित्त सर्वथा ताजा, पवित्र, स्वच्छ तथा बिलकुल शान्त होता है। इस समय मस्तिष्क बिलकुल कोरे कागज की भाँति होता है और दिन की अपेक्षा सांसारिक कार्यों से अधिक स्वतन्त्र होता है। इस समय हम चित्त को किसी भी कार्य में सुगमतापूर्वक लगा सकते हैं। इस विशेष समय वातावरण में अधिक सत्त्व होता है। अपने हाथ, पैर और मुँह धो डालो और जप करने बैठ जाओ पूरे तौर से स्नान करना अनिवार्य नहीं है।

(४) इष्टदेवता का चयन

तुम शिव, कृष्ण, राम, विष्णु, दत्तात्रेय, गायत्री, दुर्गा अथवा काली में से किसी एक को अपना आराध्य मान लो। यदि तुम स्वयं ऐसा न कर सको तो किसी अच्छे गुरु से इस विषय में सलाह लेकर अपने देवता को चुन लो। ज्योतिषी भी तुम्हारे ग्रहों के अनुसार इष्टदेवता का चयन कर देगा। हममें से हर एक ने

पूर्वजन्म में किसी-न-किसी देवता की पूजा की हैं। हमारे चित्त में उसके संस्कार सन्निहित हैं। अतः हममें से प्रत्येक का किसी एक देवता की ओर झुकाव होता है। यदि तुमने पूर्वजन्म में श्रीकृष्ण जी की पूजा की थी तो इस जन्म में भी तुम्हारा झुकाव श्रीकृष्ण जी की ओर अधिक होगा।

जब तुम बहुत मुसीबत में फँस गये हो तो तुम स्वभावतः ही ईश्वर का कोई नाम लोगे। इससे तुम्हें इष्टदेवता के चुनाव में सुगमता होगी। ईश्वर का जो नाम तुम्हारे मुँह से निकलता है, बस उसी की पूजा तुमने पूर्वजन्म में की है। अगर बिच्छू ने तुम्हें काट लिया है तो तुम हे राम, हे कृष्ण, हे नारायण, हे शिव कोई भी एक नाम पुकारोगे। इस प्रकार जिस नाम को तुम पुकारते हो, वही तुम्हारा इष्ट देवता है। यदि तुमने पूर्वजन्म में श्रीराम जी की पूजा की है तब तुम स्वभावतः ही श्रीराम पुकारोगे।

(५) जप के लिए आसन

जप आधे घण्टे से ले कर आरम्भ करना चाहिए। पद्म, सिद्ध, सुख अथवा स्वस्ति आसन पर बैठो। धीरे-धीरे समय बढ़ाते जाओ और तीन घण्टे तक कर दो। लगभग एक साल के अन्दर तुमको आसन-सिद्धि प्राप्त हो जायेगी, अर्थात् तुम्हें उस विशेष आसन पर बैठने से कष्ट नहीं प्रतीत होगा। तुम स्वाभाविक रूप से ही उस आसन पर बैठ जाया करोगे। शरीर को किसी भी सरल तथा सुखपूर्वक अवस्था में स्थिर रखने को आसन कहते हैं—स्थिरं सुखमासनम्।

अपने शिर, गरदन और धड़ को बिलकुल सीधा रखो। चार तह करके एक कम्बल जमीन पर बिछा लो। उस कम्बल पर

एक मुलायम सफेद कपड़ा बिछाओ। यदि तुम्हें पञ्जों और शिर-सहित मृगछाला मिल जाय तो वह कम्बल से अधिक अच्छी है। मृगचर्म के अनेक लाभ हैं। वह शरीर में विद्युत्-शक्ति को उत्पन्न करती है और उसको शरीर से निकालने से रोकती है। मृगचर्म में आकर्षण-शक्ति रहती है।

आसन पर बैठने पर मुँह उत्तर या पूर्व की ओर कर लो। नये साधक को इसका पालन अवश्य करना चाहिए। उत्तर की ओर मुँह करने से तुम हिमालय के ऋषियों के सम्पर्क में आओगे और उनके सम्पर्क से तुम्हारा अद्भुत विकास होगा।

पद्मासन

अपने आसन पर बैठ जाओ। अब अपना बायाँ पैर दाहिनी जङ्घा पर और दाहिना पैर बायीं जङ्घा पर रखो। हाथ घुटनों पर रख लो। बिलकुल सीधे बैठो। यही पद्मासन है जो जप तथा ध्यान के लिए बहुत ही उपयुक्त है।

(६) चित्त की एकाग्रता

तुम हृदय-कमल (अनाहत-चक्र) पर या दोनों भृकुटियों के स्थान पर, जो आज्ञा-चक्र कहलाता है अपने चित्त को स्थिर कर एकाग्र करो। हठयोगियों के अनुसार आज्ञा-चक्र मस्तिष्क का स्थान है। यदि कोई मनुष्य आज्ञा-चक्र पर चित्त को लगा कर उसे एकाग्र कर लेता है तो उसका मस्तिष्क सुगमता से उसके वश में हो जायगा। अपने स्थान पर बैठ जाओ, आँखें बन्द कर लो और जप तथा ध्यान करना आरम्भ कर दो।

जब कोई व्यक्ति दोनों भृकुटियों के बीच में अपनी दृष्टि को

एकाग्र कर लेता है तब वह भ्रूमध्य-दृष्टि कहलाती है। अपने ध्यान के कमरे में पद्मासन, सिद्धासन अथवा स्वस्तिकासन लगा कर बैठ जाओ और दोनों भृकुटियों के मध्य में अपनी दृष्टि को स्थिर कर दो। यह अभ्यास क्रमशः बढ़ाना चाहिए। आधे मिनट से प्रारम्भ कर आधे घण्टे तक बढ़ाते रहना चाहिए। इस अभ्यास में तनिक भी उत्पात अथवा गड़बड़ नहीं होनी चाहिए। समय को क्रमशः बढ़ाते जाना चाहिए। यह योग-क्रिया विक्षेप अथवा मन की चञ्चलता को दूर कर देती है और चित्त को एकाग्र बनाती है। श्रीकृष्ण जी ने इस अभ्यास को भगवद्गीता के पञ्चम अध्याय के २७ वें श्लोक में इस प्रकार निर्दशित किया है—'बाहरी सम्वन्धों को बिलकुल तोड़ कर और दोनों भृकुटियों के बीच के स्थान पर दृष्टि को स्थिर करना' आदि।

अपने आसन पर आसीन हो जाओ। अपनी दृष्टि को नासिका के अग्रभाग पर लगाओ। इसका अभ्यास आधे मिनट से ले कर आधे घण्टे तक बढ़ाओ। यह अभ्यास धीरे-धीरे ही करना चाहिए। अपनी आँखों पर जोर मत डालो। समय को धीरे-धीरे ही बढ़ाओ। यह नासिकाग्र-दृष्टि कहलाती है। तुम अपने लिए चाहे भ्रूमध्य-दृष्टि चुनो, चाहे नासिकाग्र-दृष्टि, दोनों ही ठीक हैं। जब तुम सड़क पर चल रहे हो, उस समय भी तुम्हें इसका अभ्यास करते रहना चाहिए। इससे तुम्हें चित्त को एकाग्र करने में सहायता मिलेगी। चलते समय भी जप का कार्य सुचारु रूप से चल सकता है।

कुछ साधक आँखें खोल कर चित्त को एकाग्र करना पसन्द करते हैं, कुछ आँखें बन्द करके और कुछ आधी आँखें खुली

रखना चाहते हैं। अगर तुम आँखें बन्द करके ध्यान करते हो तो धूल या दूसरे कण तुम्हारी आँखों में नहीं जायेंगे। कुछ साधक, जिनको बन्द आँखों में रोशनी और तारे दिखायी देते हैं, खुली आँखों से ध्यान करना पसन्द करते हैं। कुछ लोगों को, जो आँखें बन्द करके ध्यान करते हैं, निद्रा बड़ी जल्दी ही धर दबाती है। प्रारम्भ में जो खुली आँखों से ध्यान करना शुरू करता है, उसका मन बड़ी जल्दी ही सांसारिक वस्तुओं में भटकने लगता है और चञ्चल हो जाता है। इस प्रकार अपनी सहज बुद्धि के अनुसार, जो विधि तुम्हें ठीक लगे उसी विधि से ध्यान आरम्भ कीजिए। दूसरी बाधाओं पर भी अपनी बुद्धि द्वारा सोच-विचार कर विजय पाओ। 'ब्रूस और मकड़ी' के दृष्टान्त पर मनन करो। शान्तिपूर्वक और धैर्य-सहित काम लो। परिश्रम से आध्यात्मिक विजय पाओ। आध्यात्मिक वीर बनो और अपने गले के चारों ओर आध्यात्मिकता की माला धारण कर लो।

(७) जप के लिए तीन बैठकें

उषाकाल तथा गोधूलि की बेला में एक रहस्यमय आध्यात्मिक वातावरण कर्मशील रहता है और एक अद्भुत आकर्षण होता है; अतः इन दोनों सन्धिकालों में मन शीघ्र ही पवित्रता को प्राप्त होने लग जायगा और सत्त्व से परिपूरित हो जायगा। सूर्य निकलने और डूबने के समय चित्त को एकाग्र करना बहुत ही सुगम है; अतः जप का अभ्यास सन्धिकाल में करना चाहिए। इस समय चित्त एकदम शान्त और ताजा होता है। अतः ध्यान लगने में सरलता होती है। ध्यान जीवन का अनिवार्य उत्तरदायित्व है। इसके पश्चात्

तुम अपना आध्यात्मिक कार्य समाप्त कर सकते हो। जब तुम चित्त को एकाग्र करने का अभ्यास करते हो, तो निद्रा का अवश्य आगमन होता है। इसलिए कम-से-कम ५ मिनट के लिए आसन और प्राणायाम करना अनिवार्य है। आसन और प्राणायाम करने से निद्रा का निवारण किया जा सकेगा। तुम जप तथा ध्यान सुगमतापूर्वक कर सकोगे।

प्राणायाम करने के पश्चात् हमारा मन एकाग्रता को प्राप्त करने लगता है। इसलिए जब प्राणायाम समाप्त हो जाये, तभी ध्यान तथा जप का अभ्यास करना चाहिए। यद्यपि प्राणायाम का सम्बन्ध श्वास से है, पर उससे हमारा मन भी एकदम स्वस्थ और ताजा हो जाता है। हमारे अन्दरूनी अङ्ग भली-भाँति कार्य करने लगते हैं। यह शारीरिक क्रियाओं में उत्तम क्रिया है।

यदि तुम एक ही बैठक में मन्त्र का जप करते-करते थक जाओ तो दिन में दो या तीन बैठकें लगा लो—ब्राह्ममुहूर्त्त को चार बजे से सात बजे तक, सन्ध्या को चार से पाँच बजे तक और रात्रि को छः से आठ बजे तक। जब तुम यह देखो कि तुम्हारा मन चञ्चल हो रहा है तो थोड़ी देर खूब जल्दी-जल्दी जप करो। साधारणतः सबसे अच्छा तरीका यह है कि न तो बहुत जल्दी और न बहुत धीरे जप करो। मन्त्र के अक्षरों का स्पष्ट उच्चारण करो। मन्त्र का जप अक्षर लक्ष बार करना चाहिए। अगर मन्त्र में पाँच अक्षर हों तो उसका जप पाँच लाख बार करो।

यदि तुम किसी नदी या झील के किनारे कुएँ पर, मन्दिर में, पहाड़ के नीचे, किसी सुन्दर वाटिका में या किसी अकेले

शान्त कमरे में जप करने बैठोगे तो चित्त बड़ी सुगमता से अप्रयास एकाग्र हो जायगा। अगर तुम्हारा पेट खूब भरा है और जप करने बैठ गये तो खूब गहरी नींद धर दबायेगी। अतः तुम हलका और सात्त्विक खाना खाओ। पहले कोई प्रार्थना करो तब जप के लिए बैठ जाओ। बस फिर तुम्हारा मन इस सांसारिक प्रवृत्ति से ऊपर उठ जायेगा और तुम्हें माला के दाने फेरने में बड़ा आनन्द आयेगा और कोई कठिनाई नहीं रहेगी। आध्यात्मिक साधना करते समय तुम्हें प्रत्येक दशा में अपनी सहज बुद्धि से काम लेना चाहिए। कुछ समय के लिए तुम्हें हरिद्वार, वाराणसी, ऋषिकेश आदि जाना चाहिए और वहाँ गङ्गा के किनारे बैठ कर जप करना चाहिए। तुम्हें ज्ञात होगा कि इस जप से तुम आध्यात्मिक मार्ग पर उल्लेखनीय प्रगति करोगे; क्योंकि ऐसे स्थानों पर तुम्हारा मन सांसारिक कार्यों, चिन्ताओं और परेशानियों से बिलकुल दूर होता है और इसी-लिए जप और ध्यान बड़ी अच्छी तरह से होता है। आध्यात्मिक डायरी में जप का हिसाब रखो।

प्रत्येक दिन के जप का हिसाब रखने के लिए एक आध्यात्मिक डायरी रखो। जब तुम जप करते हो तो तर्जनी का प्रयोग मत करो। दाहिने हाथ का अँगूठा और मध्यमा का प्रयोग करना चाहिए। तुम अपने हाथ को किसी वस्त्र से ढक लो या उसको गोमुखी के अन्दर डाल लो, जिससे तुम्हें दूसरे लोग माला फेरते हुए न देख सकें।

आत्म-निरीक्षण करो। अन्तरावलोकन करो। अपने मन और उसकी वृत्तियों को ध्यानपूर्वक देखो। कुछ देर किसी एकान्त कमरे में बैठो। जैसे मन विभिन्न प्रकार के भोजन चाहता है, वैसे ही वह जप में भी विभिन्नता को पसन्द करता

है। जब तुम्हारा मन मानसिक जप से ऊब कर चलायमान होने लगे, तो जोर-जोर से जप करो। इससे कान भी मन्त्र का श्रवण कर सकेंगे। अतः अब कुछ समय के लिए मन की एकाग्रता दृढ़ हो जायेगी। जोर-जोर से जप करने से हानि यह है कि तुम लगभग एक ही घण्टे में थक जाओगे। तुम्हें जप करने की तीनों विधियों से जप करते समय अपनी बुद्धि से काम लेना चाहिए। जो मनुष्य अभी साधना आरम्भ कर ही रहा है, उसके लिए मानसिक जप से प्रारम्भ करना दुष्कर होगा; क्योंकि अभी उसकी बुद्धि स्थूल है।

राम के मन्त्र का मानसिक जप सोऽहं अथवा अजपा जप की भाँति हर श्वास के साथ हो सकता है। जो जप बिना ओंठ हिलाये होता है, उसे अजपा जप कहते हैं। जब तुम अन्दर साँस लेते हो तो मन में 'रा' कहो और जब साँस बाहर निकालते हो तो 'म' कहो। चलते समय भी इस प्रकार के जप का अभ्यास करते रहो। कुछ समय के लिए यह उपाय सुगम प्रतीत होता है। ध्यान करते समय कमरे के अन्दर भी तुम इसका अभ्यास कर सकते हो। यही राम के मन्त्र के जप का अजपा जप है।

(८) माला की आवश्यकता

तुम्हें सदैव अपने गले में या जेब में माला रखनी चाहिए तथा रात को सिरहाने के नीचे उसको रख लेना चाहिए। जब तुम माया अथवा अविद्या के कारण ईश्वर का विस्मरण कर दोगे तो माला उसका तुम्हें पुनः स्मरण करायेगी। रात को जब तुम लघुशंका के लिए उठते हो, तब माला तुम्हें याद

दिलायेगी कि तुम उसको एक-दो बार फेर लो। मन को वश में करने के लिए माला एक उत्तम उपकरण है। मन को ईश्वर में तल्लीन करने के लिए वह कोड़े का काम करती है। १०८ मनकों की रुद्राक्ष-माला अथवा तुलसी-माला जप में प्रयुक्त की जा सकती है।

जैसे किसी वकील को देखने पर कचहरी, मुकद्दमे, गवाही और मुवक्किलों की तुरन्त याद आ जाती है और डाक्टर को देखने पर अस्पताल, रोगियों, औषधियों, रोगों आदि की याद आ जाती है, वैसे ही माला देखने से तुमको ईश्वर और उसकी सर्वव्यापी महिमा की याद आ जायेगी। इसलिए सदैव अपने गले में माला पहने रहो और उससे जप करो। ओ शिक्षित नवयुवको, माला पहनने में सङ्कोच मत करो। यह माला तुम्हें सदैव ईश्वर की याद दिलायेगी और ईश्वर-प्राप्ति का मार्ग सरल बनाती रहेगी। यह माला एक सोने के हार से, जो नौ प्रकार के अमूल्य रत्न से जड़ा हुआ हो, कहीं अच्छी है; क्योंकि यह तुम्हारे में सात्त्विक विचार भर देती है और तुम्हारा ईश्वर से साक्षात्कार करा कर इस जन्म-मरण के बन्धन से तुम्हें सदैव के लिए मोक्ष प्राप्त कराती है।

(९) जपमाला के प्रयोग की विधि

साधारणतः जपमाला में १०८ मनके होते हैं। इन १०८ मनकों के मध्य में एक जरा बड़ा दाना होता है, जिसे मेरु कहते हैं। यही दाना तुम्हें बताता है कि तुमने किसी मन्त्र का १०८ बार जप कर लिया। जप करते समय तुम्हें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि तुम मेरु को न पार करो, वरन् पुनः पीछे ही लौट आओ और फिर माला जपना आरम्भ कर

दो। इस प्रकार अपनी अँगुलियों को पीछे की ओर लौटाना चाहिए। जब माला से जप करते जा रहे हो तो तर्जनी का प्रयोग निषिद्ध समझना चाहिए। अँगूठा और मध्यमा का ही प्रयोग किया जाना चाहिए।

(१०) जप-गणना की विधि

यदि तुम्हारे पास माला नहीं है तो जप को गिनने के लिए अपने दाहिने हाथ की अँगुलियों का प्रयोग कर लो। प्रत्येक अँगुली के तीन विभाग होते हैं, तुम इन विभागों को जप के साथ-साथ, अँगूठे से आरम्भ कर गिन सकते हो। जब तुमने जप की एक माला समाप्त कर ली है तो बायें हाथ के अँगूठे को बायें हाथ की अँगुली के प्रथम विभाग पर और दूसरी माला समाप्त होने पर दूसरे विभाग पर रख लो। इस प्रकार दाहिने हाथ से तो तुम जप करते जाओगे और बायें हाथ में माला को गिनते रहोगे। इसके बदले में पत्थर के टुकड़ों का प्रयोग भी किया जाता है। यदि इस प्रकार जप करने से एकाग्रता और अविच्छिन्नता में बाधा पड़ती हुई जान पड़े तो एक दिन यह पता लगा लो कि २ घण्टे जप करने में कितनी मालाएँ समाप्त हो सकती हैं। तदन्तर समय के अनुसार अपनी प्रगति का अनुमान लगा सकते हो; किन्तु पुरश्चरण करने वाले को केवलमात्र समय पर ही भरोसा नहीं रखना चाहिए।

(११) तीन प्रकार के जप

कुछ देर तक उच्चारण करते हुए, फिर थोड़ी देर ओष्ठोच्चारण कर और तत्पश्चात् मानसिक जप करो। मन विभिन्नता

चाहता है, एक ही चीज से ऊब जाता है। मानसिक जप सबसे अधिक शक्तिशाली है। मौखिक जप को वैखरी कहा जाता है और फुसफुसाहट के साथ जप करने को उपांशु कहते हैं। भावहीन वृत्तिपूर्वक भी ईश्वर के नाम का जप किया जाय तो वह हमारे मन को स्वच्छ और पवित्र बना देता है। इस प्रकार जब मानसिक निर्मलता और पवित्रता का अवतरण हो जायेगा, तो भावना स्वत: ही आ जायेगी।

उच्च स्वर में जप करने से बाहरी ध्वनियों से उदासीन रहा जा सकता है—यह कभी भी खण्डित नहीं हो पाता। साधारण लोगों के लिए मानसिक जप कठिन प्रतीत होता है और उनके मन में कुछ ही क्षण में बाधा आ सकती है, जिससे जप खण्डित हो जायगा। जब तुम रात को जप करते हो तो निद्रा आ धर दबाती है। इस समय अपने हाथ में एक माला ले लो और मनके फेरने लगो। इससे निद्रा का निराकरण किया जा सकता है। उच्च स्वर से जप करो। मानसिक जप न करो। माला तुम्हें जप के रुक जाने की चेतावनी देती रहेगी। यदि निद्रा बहुत ही सताती है तो खड़े हो कर जप करो।

शाण्डिल्य-उपनिषद् में कहा है— वैखरी जप से वह लाभ होता है, जिसको वेदों में वर्णित किया है और उपांशु जप से वैखरी जप का हजार गुना लाभ होता है और मानसिक जप वैखरी जप से करोड़ गुना अधिक लाभ पहुँचाता है। एक साल तक वैखरी जप का ही अभ्यास करते रहो। पुन: दो वर्ष तक मानसिक जप का अभ्यास करो। एक वर्ष तक श्वास के साथ-साथ अपने जप का समन्वय स्थापित कर लो।

जब तुम्हारा अभ्यास बढ़ जाता है, तब तुम्हारा रोम-रोम जपमय हो जाता है। फलतः तुम्हारा सम्पूर्ण शरीर मन्त्र के शक्तिशाली स्पन्दनों से परिपूर्ण हो जाता है और तुम सदा ईश्वर की भक्ति में मग्न रहने लगते हो। एक ऐसी अवस्था भी आती है जब आँखों से अश्रुपात होने लगता है और शरीर की चेतना से तुम परे चले जाते हो। तुम्हें उत्साह, दिव्य ज्योति, आनन्दोल्लास, प्रज्ञा, अन्तःज्ञान तथा परमानन्द की प्राप्ति हो जायेगी। इस उत्साहपूर्ण भावना से कविताएँ बहने लगती हैं और सिद्धियों का अवतरण होने लगता है। ऐश्वर्य करतलामलकवत् हो जाते हैं।

ईश्वर के नाम का निरन्तर जप करते रहो। इससे तुम्हारा मन तुम्हारे वश में हो जायेगा। जप पूर्ण श्रद्धा के साथ करो। जप का अभ्यास आन्तरिक प्रेम और दिव्य अनुराग के साथ करना चाहिए। ईश्वर के विरह की अनुभूति की प्रतीति होनी चाहिए। इस विरह में तुम्हारी आँखों से निरन्तर अश्रुपात होता रहे। जप करते समय यह ध्यान करो कि ईश्वर का निवास तुम्हारे हृदय में है, उसके हाथों में शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म सुशोभित हैं, चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश है, वे पीले वस्त्रों से अलंकृत हैं और उनके हृदय में श्रीवत्स तथा कोस्तुभ मणि शोभायमान है। इस शृङ्गार पर ध्यान करने से जप गम्भीर होने लगेगा।

(१२) जप में कुम्भक और मूलबन्ध

जब तुम जप करने के लिए बैठते हो तो सिद्धासन लगाओ और मूलबन्ध का अभ्यास करो। इससे चित्त को एकाग्र करने में सफलता मिलती है। यह अभ्यास अपान वायु को नीचे की

ओर आने से रोकता है। पद्मासन पर बैठने का अभ्यास होने से तुम साधारण रूप से मूलबन्ध कर सकते हो।

जितनी देर तक सुगमतापूर्वक हो सके, कुम्भक का भी अभ्यास करो। श्वास के रोकने की क्रिया को कुम्भक कहा जाता है। कुम्भक के अभ्यास से चित्त दृढ़तर बनता जाता है और एकाग्रता का स्वतः अवतरण होता है। इसके अभ्यास से तुमको परम दिव्य आनन्द की प्राप्ति होगी।

जब तुम मन्त्र का जप करते हो तो मन्त्र के अर्थ को समझते हुए जप करो। राम, कृष्ण, शिव, नारायण—इन सबका अर्थ है, सत्, चित्, आनन्द अर्थात् पवित्रता, पूर्णता, ज्ञान, सत्यता तथा अमरत्व।

(१३) जप और कर्मयोग

कार्य करते समय हाथों को काम में लगाओ और मन को ईश्वर की सेवा में अर्थात् मन्त्र का मानसिक जप करते रहो। अभ्यास करते-करते दोनों काम साथ-साथ किये जा सकते हैं। हाथ अपना कार्य करते रहेंगे और मानसिक शक्ति जप में संलग्न रहेगी। ऐसा समझ लो कि तुम्हारे दो अन्तःकरण हो गये और तब तुम बिना किसी कठिनाई के दो कार्य साथ-साथ कर सकते हो। अन्तःकरण का एक भाग तो कार्य कराता रहेगा और दूसरा भाग जप-साधना और भगवद्-स्मरण। कार्य करते-करते भगवान् का जप करते रहो। यह अष्टावधानी के लक्षण हैं, एक ही साथ आठ काम करते रहना। यह तो अन्तः-करण की अभ्यास करने की बात है। यदि तुम अपने अन्तःकरण को इस साँचे में ढाल लो कि वह इन्द्रियों के माध्यम से अनेक कार्य साथ-साथ करता रहे और जप का प्रवाह भी निरन्तर

चलता रहे तो तुम प्रत्येक कार्य को अत्यन्त सुगमतापूर्वक कर सकोगे। इस प्रकार कर्मयोग और भक्तियोग का समन्वय सिद्ध किया जा सकता है। गीता में भगवान् यही कहते हैं—

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम् ॥

(गीता : ८-७)

—अतः मेरा चिन्तन करो और युद्ध में प्रवृत्त हो जाओ। यदि तुम अपने मन और अन्तःकरण को मुझमें लगाये रहोगे तो निःसन्देह मेरे पास पहुँच सकोगे।" यद्यपि गाय दिनभर चरागाहों में घास चरती है, पर उसका मन अपने उस बछड़े पर रहता है, जो घर में छूटा हुआ है। इसी दृष्टान्त के अनुसार तुम्हें अपना ध्यान ईश्वर पर लगा कर जप और हाथों से काम करना होगा।

(१४) लिखित जप

प्रतिदिन अपना गुरु-मन्त्र अथवा इष्टमन्त्र अपनी नोटबुक में लिखो। इस अभ्यास में कम-से-कम आधा घण्टा लगाओ। मन्त्र लिखते समय मौन धारण करना चाहिए। मन्त्र स्याही से साफ-साफ लिखो। रविवार या अन्य अवकाश के दिन में एक घण्टे तक और अधिक इसका अभ्यास करो। अपने मित्रों को भी इस साधना के लिए प्रेरित करो। इससे अन्तःकरण को अपूर्व धारणाशक्ति की प्राप्ति होती है। अपने परिवार के लोगों को भी इसका अभ्यास कराओ। लिखित जप से साधारण जप की अपेक्षा कई गुना अधिक लाभ प्राप्त होता है। यहाँ पर लिखित जप का एक रूप प्रस्तुत किया जा रहा है। साधक को इसके अनुसार मन्त्र लिखना चाहिए।

ॐ

5th July 1941

Likhit Japa

(Mantra-writing)

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

Sivananda

शास्त्रों में जप करने के जो भिन्न-भिन्न उपाय वताये गये हैं, उनमें लिखित जप का प्रभाव सबसे अधिक होता है। लिखित जप चित्त को एकाग्र करने में सहायता करता है और धीरे-धीरे साधक को ध्यान की ओर अग्रसर कराता है।

साधक को अपने आराध्य का मन्त्र निश्चित कर लेना चाहिए। इसी मन्त्र के लिखित या मौखिक जप का अभ्यास करना चाहिए। मौखिक जप के लिए माला आवश्यक है तथा लिखित जप के लिए एक नोटबुक और कलम। मन्त्र लिखने के लिए किसी लिपि-विशेष की आवश्कता नहीं है—जिस भाषा में सम्भव हो, उसी में मन्त्र लिख सकते हो। मन्त्र लिखते समय निम्नलिखित नियमों का पालन करो :

१. एक ही समय पर नियमपूर्वक मन्त्र लिखो। इससे साधक को आगे बढ़ने में सहायता मिलेगी।

२. शारीरिक और मानसिक पवित्रता धारण करो। मन्त्र लिखने के पूर्व हाथ, पैर और मुँह धो डालो। अभ्यास करने के पूर्व अपने चित्त को निष्कलङ्क बनाने का प्रयत्न करो। मन्त्र लिखते समय सांसारिक विचारों को दूर हटाने की चेष्टा करो।

३. जहाँ तक हो सके मन्त्र लिखते समय एक ही आसन पर बैठो। बार-बार आसन नहीं बदलना चाहिए। एक ही आसन पर बैठे रहने से सहनशीलता में भी वृद्धि होगी।

४. लिखित जप का अभ्यास करते समय मौन धारण कर लो। अधिक बोलने से शक्ति का अपव्यय होता है और समय व्यर्थ ही नष्ट हो जाता है। मौन धारण करने से शक्ति की वृद्धि तो होती ही है, साथ-साथ कार्य में भी प्रगति आ जाती है।

५. इधर-उधर मत देखो। अपनी आँखों को नोटबुक पर केन्द्रित रखो। इससे चित्त को एकाग्र करने में अत्यधिक सहायता मिलेगी।

६. मन्त्र लिखते समय मानसिक रूप से मन्त्रोच्चारण भी करते रहो। इससे तुम्हारे अन्तःकरण पर तीनों प्रकार के संस्कार अङ्कित हो जायेंगे। क्रमशः तुम्हारा सम्पूर्ण शरीर और आत्मा ही मन्त्रमय हो उठेगा।

७. जब तुम मन्त्र लिखने के लिए बैठते हो तो यह निश्चय कर के बैठो कि तुम अमुक संख्या में मन्त्र लिख कर ही उठोगे। इससे तुम सदैव लिखित जप का अभ्यास करते रहोगे और कभी भी ऐसा नहीं होगा कि तुम मन्त्र लिखना छोड़ दो।

८. जब तक निश्चित संख्या में जप लिख न डालो, लिखना न छोड़ो, अपने आसन से न उठो। मन्त्र लिखते समय अपने को सांसारिक विचारों के साथ उलझने न दो, अन्यथा साधना में रुकावट उपस्थित हो जायेगी। एक बार बैठो तो कम-से-कम आध घण्टे तक मन्त्र लिखते रहो।

९. चित्त को एकाग्र करने के लिए यह आवश्यक है कि लिखने की प्रणाली एकसार होनी चाहिए। सम्पूर्ण मन्त्र एक ही बार में लिखना चाहिए। जब पंक्ति पूरी होने से पहले ही मन्त्र के अधूरे छूटने की सम्भावना हो तो मन्त्र को दूसरी पंक्ति से लिखना आरम्भ कर दो।

१०. जप के लिए जिस मन्त्र को तुमने एक बार चुन लिया है, उसी का जप करते रहो। मन्त्र को बार-बार बदलना उचित नहीं है।

उपरिलिखित नियमों का परिपालन करोगे तो आध्यात्मिक उन्नति सवेग होगी। चित्त सुगमतापूर्वक एकाग्र हो सकेगा। निरन्तर अभ्यास करने से तुम्हारी सुप्त मन्त्र-शक्ति जाग पड़ेगी और तुम मन्त्र की दिव्य शक्ति से उज्ज्वल हो उठोगे।

नोटबुक को सँभाल कर रखना चाहिए। उसके प्रति आदर भाव बरतना चाहिए। जब एक नोटबुक लिख चुकते हो तो उसको किसी सन्दूक में बन्द करके अपने ध्यान के कमरे में अपने इष्ट-देवता के चित्र के सम्मुख रख दो। मन्त्र की कापी की उपस्थिति तुम्हारे ध्यान के कमरे में आध्यात्मिक वातावरण को स्थिर बनाये रखेगी।

लिखित जप के लाभ कहे नहीं जा सकते। लिखित जप से चित्त एकाग्र होता है और हृदय पवित्रता से भर जाता है। मन्त्र लिखने के अभ्यास से एक आसन में बैठने का अभ्यास होता है। इन्द्रियाँ वश में हो जाती हैं। शीघ्र ही मानसिक शक्ति की प्राप्ति होती है। मन्त्र-शक्ति के द्वारा तुम ईश्वर के समीप पहुँचते हो। इन लाभों का अनुभव हम अभ्यास द्वारा ही कर सकते हैं। जो लोग इसका अभ्यास अभी तक नहीं करते, उनको आजसे ही अभ्यास आरम्भ कर देना चाहिए। यदि लोग नित्य आधा घण्टा भी इसका अभ्यास करते रहें तो छः महीने में उनको इन लाभों का अनुभव हो जायगा।

(१५) जप की संख्या

प्रत्येक व्यक्ति अनजाने में ही सोऽहम् मन्त्र २४ घण्टों में २१६०० बार जपता है। तुम्हें ऐसे प्रत्येक श्वास के साथ अपना इष्टमन्त्र कहना चाहिए। बस फिर क्या, तुम्हारी मन्त्र-शक्ति खूब बढ़ जायेगी और मन शुद्ध हो जायेगा।

तुम्हें जप की संख्या २०० से ले कर ५०० माला तक प्रतिदिन बढ़ानी चाहिए। जैसे तुम दो बार भोजन करने के लिए, प्रातःकाल चाय पीने के लिए और सन्ध्या को कोको पीने के लिए उत्सुक रहते हो वैसे ही एक दिन में चार वार जप करने के लिए भी उत्सुक रहना चाहिए। मृत्यु किसी भी समय आ सकती है और उसका आगमन असूचित ही होता है। अतः सदा रामेराम का जप करते हुए मृत्यु से मिलने के लिए तैयार रहना चाहिए। जहाँ कहीं जाओ, जप करते रहो। उस अन्तर्यामी भगवान् को कभी न भूलो, जो तुम्हें भोजन और वस्त्र देता है और हर प्रकार से तुम्हारी देखभाल करता है। तुम शौचालय में भी जप कर सकते हो, लेकिन वह जप मानसिक होना चाहिए। महिलाएँ मासिक धर्म के समय भी जप कर सकती हैं। जो लोग निष्काम भाव से जप करते हैं, उनके लिए किसी प्रकार की व्यवस्था-सम्बन्धी रुकावटें नहीं हैं। रुकावटें तो केवल वहाँ हैं, जहाँ सकाम भाव से जप किया जाता है, अर्थात् जो लोग पुत्रादि के लिए जप का अनुष्ठान करते हैं।

उपांशु और वैखरी जप की अपेक्षा मानसिक जप में अधिक समय लगता है, लेकिन कुछ लोग मानसिक जप कुछ जल्दी कर लेते हैं। इससे कुछ घण्टों के पश्चात् मन बिलकुल बेकार हो जाता है और फिर जप का कार्य यथावत् नहीं चल पाता। जो लोग घड़ी के आधार पर जप की गणना करते हैं, उनको इस प्रकार की मानसिक सुस्ती के आ जाने पर माला से जप करना आरम्भ कर देना चाहिए।

जप की प्रगति मध्यम होनी चाहिए। जप की प्रगति पर नहीं वरन् चित्त की एकाग्रता और भावपूर्णता पर जप का पूर्णतम लाभ निर्भर रहता है। जप करते समय उच्चारण की शुद्धि

अनिवार्य है। प्रत्येक अक्षर का उच्चारण स्पष्ट और शुद्ध होना चाहिए। किसी भी शब्द को खण्डित नहीं करना चाहिए। कुछ लोग कुछ ही घण्टों में एक लाख जप कर डालते हैं। वे इतनी जल्दी जप करते हैं कि मानो उन्हें कोई ठेके का काम समाप्त करना है। ईश्वर के साथ ऐसी ठेकेदारी ठीक नहीं है। इससे हृदय में भक्ति का आविर्भाव नहीं हो सकेगा। जिस जप से हृदय में भक्ति का आविर्भाव नहीं होता, वह जप किया न किया, बराबर है। हाँ, जब तुम्हारा मन सुस्त हुआ जा रहा है, उस समय तेजी से जप कर सकते हो। जिस समय मन चलायमान हो रहा है, उस समय भी जप की चाल को तेज कर सकते हो, किन्तु यह चाल ज्यादा देर तक नहीं, आधे घण्टे तक ही रखनी चाहिए।

जो लोग पुरश्चरण करते हैं और नित्य के जप का हिसाब रखते हैं, उन्हें अपना हिसाब ठीक-ठीक और सही रखना चाहिए। उनको अपने मन को बहुत ही सावधानी से देखना चाहिए और यदि वह जप करते-करते सुस्त हो जाता है तो उनको और अधिक जप करना चाहिए, जिससे वह अन्यमनस्क न हो जाय। अच्छा तो यह है कि पुरश्चरण करने वाला साधक केवल उसी संख्या को हिसाब में रखे, जिसको मन लगा कर किया गया है।

चौदह घण्टों में 'हरि ओ३म्' की ३००० मालाएँ पूरी हो सकती हैं। श्रीराम-मन्त्र का जप सात घण्टे में लाख बार किया जा सकता है। आधे घण्टे में १०००० बार श्रीराम का जप किया जा सकता है। जब तुम अपना मन्त्र १३ करोड़ बार जप लोगे, उस समय तुम्हें इष्टदेवता के दर्शन होंगे। यदि तुम वास्तव में ऐसा चाहते हो और तुममें विश्वास और श्रद्धा है तो

तुम १३ करोड़ जप चार साल में समाप्त कर सकते हो।

पुरश्चरण करने वाले को दूध और फल पर रहना चाहिए। ऐसा करने से मन सात्त्विक रहता है और आध्यात्मिक उन्नति भी अच्छी तरह होती है। पुरश्चरण के समय अखण्ड मौनव्रत का पालन करने से बड़ा लाभ होता है। जो लोग पूरे पुरश्चरण-काल में मौन-व्रत करने में असमर्थ हों वे महीने में एक ही सप्ताह का मौन रखें और जो यह भी न कर सकें उन्हें प्रति रविवार को मौन रखना चाहिए। जो लोग पुरश्चरण करते हों उन्हें प्रतिदिन का नियमित जप पूरा करके ही आसन से उठना चाहिए। उन लोगों को नियमित जप की संख्या पूरी होने तक एक ही आसन पर बैठना चाहिए। जप की गिनती माला, उँगली या घड़ी से हो सकती है।

ब्रह्म-गायत्री में चौबीस अक्षर होते हैं। इस तरह गायत्री के पुरश्चरण में चौबीस लाख गायत्री-मन्त्र का जप करना पड़ता है। जब तक कि चौबीस लाख जप तुम पूरा न कर लो तुम प्रतिदिन नियम से ४००० गायत्री जपे जाओ। इसमें नागा न हो। अपने मानस-रूपी दर्पण का मल साफ कर डालो और आध्यात्मिक बीज बोने के लिए धरती तैयार कर लो।

जैसे संन्यासियों के लिए प्रणव है वैसे ही ब्रह्मचारियों और गृहस्थों के लिए गायत्री है। प्रणव से जो फल प्राप्त होता है वही फल गायत्री-जप से भी प्राप्त होता है। जिस पद को परमहंस संन्यासी प्रणव-जप कर के प्राप्त करते हैं वही पद ब्रह्मचारी और गृहस्थ गायत्री-जप कर प्राप्त कर सकते हैं।

प्रातःकाल चार बजे ब्राह्ममुहूर्त्त में उठ कर जप और ध्यान करना आरम्भ कर दो। यदि इतना सबेरे न उठ सको तो सूर्योदय के पूर्व उठ कर जप और ध्यान अवश्य करो।

(१६) जप का समय-क्रम

संख्या मन्त्र		प्रति मिनट की गति	जप की संख्या जो एक घण्टे में की जा सकती है	नित्य ६ घण्टे के हिसाब से एक पुरश्चरण का समय — साल, महीना, दिन, घण्टे, मि०
१. प्रणव	वैखरी	१४०	८४००	११-५४
	उपांशु	२५०	१५०००	६-४०
	मान सक	४००	२४०००	४-१०
२. हरि ॐ या श्रीराम	वैखरी	१२०	७२००	१-३-४७
	उपांशु	२००	१२०००	१६-४०
	मानसिक	३००	१८०००	११-७
३. षडाक्षर शिव-मन्त्र	वैखरी	८०	४८००	१७-२-१०
	उपांशु	१२०	७२००	११-३-३०
	मानसिक	१५०	९०००	९-१-३५
४. अष्टाक्षर नारायण	वैखरी	६०	३६००	१-७-०-१५
	उपांशु	८०	४८००	२७-४-४५
	मानसिक	१२०	७२००	१८-३-१५

जप का समय-क्रम

संख्या मन्त्र		प्रति मिनट की गति	जप की संख्या जो एक घण्टे में की जा सकती है	नित्य ६ घण्टे के हिसाब से एक पुरश्चरण का समय साल, महीना, दिन, घण्टा, मि०
५. द्वादशाक्षर	वैखरी	४०	२४००	२-२३-२-०
	उपांशु	६०	३६००	१-२५-३-३०
	मानसिक	९०	५४००	१-७-०-१५
६. गायत्री	वैखरी	६	३६०	३-०-१६-०-४५
	उपांशु	८	४८०	२-५-८-५-३०
	मानसिक	१०	६००	१-७-१५-३-३५
७. हरे राम मन्त्र (महामन्त्र)	वैखरी	८	४८०	३-०-१६-०-४५
	उपांशु	१०	६००	२-५-८-५-३०
	मानसिक	१५	९००	१-७-१७-३-३५

नित्य तीन या चार हजार गायत्री जपना बड़ा लाभदायक होता है। तुम्हारा हृदय शीघ्र शुद्ध हो जायगा। यदि इतना जप न हो सके तो कम-से-कम १०८ गायत्री-मन्त्र प्रतिदिन जप लिया करो, अर्थात् ३६ सबेरे, ३६ दोपहर और ३६ सन्ध्या को।

(१७) बीजाक्षर

बीज अक्षर बड़े शक्तिशाली मन्त्र होते हैं। प्रत्येक देवता का अलग बीजाक्षर होता है। क्लीं भगवान् कृष्ण का बीजाक्षर है। बङ्गाल के लोग इसका उच्चारण क्लीङ् और मद्रास के लोग क्लीम् कहते है। रां श्रीरामचन्द्र जी का बीजाक्षर है। ऐं सरस्वती जी का बीजाक्षर है। क्रीं काली का, गं गणेश जी का, स्वं कार्त्तिकेय का, हौं भगवान शङ्कर का, श्रीं लक्ष्मी का, दुं दुर्गा का, ह्रीं माया का, इसी को तान्त्रिक प्रणव भी कहते हैं। ग्लौं भी गणेश जी का बीजाक्षर है।

बीजाक्षर का अर्थ बड़ा रहस्यपूर्ण होता है। तान्त्रिक लोग बीजाक्षरों का प्रयोग बहुत करते हैं। तन्त्र-विद्या में बीजाक्षरों का महत्त्व है। उदाहरण के लिए बीजाक्षर ह्रीं को लीजिए; इसमें ह, र, ई और म् चार अक्षर हैं।

ह—महादेव जी का द्योतक है।
र=प्रकृति का द्योतक है।
ई—महामाया का द्योतक है।
म्—सब तरह के कष्टों और यातनाओं का नाश करने का द्योतक है।

पूरे ह्रीं बीजाक्षर का अर्थ हुआ 'जैसे अग्नि सब पदार्थों को जला कर भस्म करता है, वैसे ही देवी जी, जो सारे विश्व को उत्पन्न, पालन और संहार करती हैं और जो तीनों तरह के शरीर उत्पन्न, पालन और संहार करती हैं, हमारे सांसारिक कष्टों का नाश करें और मुझे संसार के बन्धन से मुक्त कर दें।

अपने गुरु से आपको अन्य अनेक बीजाक्षरों के अर्थ ज्ञात होंगे।

(१८) जपयोग-साधना-सम्बन्धी निर्देश

१. जप-साधना की आवश्यकता

(१) मनुष्य केवल रोटी पर ही जीवित नहीं रह सकता है; परन्तु वह भगवान् के नाम-स्मरण पर जीवित रह सकता है।

(२) योगी चित्तवृत्तिनिरोधपूर्वक अनेक रूपों में बदलने वाले विचारों को अधीन करके, ज्ञानी अपनी ब्रह्माकार-वृत्ति धारण करके अनन्तता के शुद्ध विचार को विशाल रूप दे कर और भक्त भगवान् के नाम-स्मरण द्वारा भवसागर पार उतरता है। भगवान् के नाम में अपूर्व शक्ति है। वह अपार आनन्ददायक है। वह अमरत्व प्रदान करता है। उसकी शक्ति से आप भगवान् का दर्शन कर सकते हैं। वह आपको भगवान् के सम्मुख खड़ा करके आपमें अनन्त से एकता तथा संसार से एकरूपता लाता है। भगवान् के नाम में कितनी आश्चर्यजनक विद्युत् की भाँति प्रभावशाली शक्ति है! मेरे प्रिय मित्र वर्ग! उस भगवान् का जप करते हुए और माला फेरते हुए उसकी अनन्त तथा अमर शक्ति का अनुभव करो। जो प्राणी भगवान् का स्मरण नहीं करता है, वह महा-नीच

है। यदि वह भगवान् के नामस्मरण बिना दिन व्यतीत करता है तो वह ऐसा है जैसे कि उसने समय बिलकुल व्यर्थ नष्ट कर दिया।

(३) राम-नाम की अपूर्व और अलौकिक शक्ति ने पानी पर पत्थर तैराये और सेतुबन्ध रामेश्वर का पुल सुग्रीव तथा उनके सहयोगियों से निर्माण कराया। केवल राम-नाम की शक्ति थी जिसने धधकते हुए अग्नि-कुण्ड में फेंके हुए प्रह्लाद भक्त को शीतलता प्रदान की और उन्हें जीवित रखा।

(४) भगवान् का प्रत्येक नाम अमृत-रूप है। वह मिश्री से भी अधिक मधुर है। वह जीवों को अमर करने वाला है। वह वेदों का सार है। देवताओं और असुरों ने समुद्र को मथ कर उसके सार अमृत को निकाला, उसी प्रकार चारों वेदों को मथने पर राम-नाम-रूपी अमृत सार निकाला गया है। महर्षि वाल्मीकि की भाँति निरन्तर स्मरण द्वारा उस अमृत का पान करते रहो।

(५) वह बङ्गला, महल तथा स्थान, जहाँ हरिकीर्त्तन तथा सत्सङ्ग नहीं होता है, श्मशान-तुल्य है, चाहे वह कितने गुदगुदी मखमली गद्देदार आराम कुरसी, सोफा-सेट, बिजली के पंखों तथा रोशनी और सुन्दर बगीचों इत्यादि से क्यों न सजा हो।

(६) प्रत्येक वस्तु को चित्त से दूर करो। भिक्षा पर निर्भर रहो। एकान्तवास करो। लगातार १४ करोड़ 'ॐ नमो नारायणाय' जप करो। यह चार वर्ष के अन्दर हो सकता है। प्रतिदिन एक लाख जप करो, तुम भगवान् का प्रत्यक्ष रूप से साकार दर्शन कर सकते हो। क्या तुम कुछ समय के लिए कष्ट सहन नहीं कर सकते, जबकि तुम इसके द्वारा अमरत्व,

अनन्तता, शान्ति और सदा स्थिर रहने वाला आनन्द प्राप्त कर सकते हो ?

(७) जप अत्यन्त चित्त-शोधक है। वह चित्त की वृत्तियों अर्थात् विचारों को विषयों की ओर जाने से रोकता है। वह बुद्धि को भगवान् की ओर प्रेरित करता है और मोक्ष-प्राप्ति की ओर आकर्षित करता है।

(८) जप भगवान् के दर्शन कराने में सहायक है। प्रत्येक मन्त्र में मन्त्र-चैतन्य छिपा हुआ है।

(९) जप साधक की साधना-शक्ति को बलवती करता है। वह उसको धर्म तथा परमार्थ में दृढ़ करता है।

(१०) मन्त्र के उच्चारण से उत्पन्न स्पन्दनों का परस्पर सम्बन्ध हिरण्यगर्भ से उत्पन्न मूल स्पन्दन से रहता है।

(११) जप से उत्पन्न स्वरों से निकले हुए स्पन्दन पाँचों कोषों के अनियमित स्पन्दनों को नियमानुसार कार्य करने में लगाते हैं।

(१२) जप बुद्धि को संसार की ओर से फेर कर आध्यात्मिकता की ओर तथा रजोगुणी वृत्ति से सतोगुणी वृत्ति तथा प्रकाश की ओर लाता है।

(१३) भगवान् का नाम आत्मिक ज्ञान का अक्षय भण्डार है।

(१४) यन्त्र की भाँति भी भगवान् का जप आत्मिक उन्नति में योग देता है। तोते की तरह रटना निरर्थक नहीं। उसका भी अपना प्रभाव है।

२. नामस्मरण का अभ्यास

(१५) सत्ययुग में केवल ध्यान-मार्ग ही विशेष प्रकार का

साधन बताया गया है; क्योंकि उस युग में मनुष्यों की बुद्धि साधारणतया शुद्ध और विघ्न-बाधाओं से मुक्त थी।

(१६) त्रेतायुग में यज्ञ प्रचलित था, क्योंकि यज्ञ की सामग्री सुविधापूर्वक प्राप्त थी और उस समय मनुष्य कुछ रजोगुण की ओर झुके हुए थे।

(१७) द्वापरयुग में पूजा की प्रणाली पर जोर दिया गया है।

(१८) कलियुग में मनुष्यों की बुद्धि या प्रकृति भोग की ओर अधिक झुकी होती है। ध्यान, पूजा तथा यज्ञकर्म सम्भव नहीं है। उच्च स्वर से भगवत् मन्त्र का उच्चारण या कीर्त्तन या नामस्मरण (भगवान् के नाम का जप) भगवत्प्राप्ति के मुख्य साधन हैं।

(१९) भगवान् का नाम नौका है और सङ्कीर्त्तन तुम्हारी बल्ली है। इस संसार-सागर को इस नौका तथा बल्ली से पार करो।

(२०) बिना भगवान् के नाम के जप के किसी भी प्राणी को मुक्ति प्राप्त नहीं होती। तुम्हारा सबसे उच्च कर्त्तव्य उसका निरन्तर नाम-स्मरण करना है।

(२१) राम-नाम चारों वेदों का सार है। जो कोई 'राम, राम' का निरन्तर जप करता है और प्रेम के आँसू बहाता है, उसे जप नित्य और स्थायी आनन्द प्राप्त करता है। राम का नाम उसका पथ-प्रदर्शक बनेगा। अतः 'राम-राम' भजो।

(२२) राम-नाम उच्चारण करने वाले प्राणी को दुःख कभी नहीं होता है; उसमें मनुष्यों को निरन्तर रहने वाले आवागमन के चक्र से छुड़ाने की सामर्थ्य होती है।

(२३) हरि का नाम पापों को विध्वंस करने के लिए सबकी अपेक्षा अधिक सुरक्षित तथा सरल उपाय है—यह बात किसी से गुप्त नहीं है।

(२४) भगवान् का नाम शक्ति को प्राप्त करने का ऐसा उपाय है जो कभी विफल नहीं होता। तुम्हारी परीक्षा के सबसे अधिक सङ्कटमय समय पर केवल भगवान् का नाम ही तुम्हारी रक्षा कर सकता है।

(२५) प्रह्लाद, ध्रुव, सनक आदि ने भगवान् का साक्षात्कार नाम-स्मरण द्वारा ही किया।

(२६) पापी से पापी मनुष्य भी भगवान् के नाम-जप से निश्चयतः भगवत्प्राप्ति कर सकता है।

(२७) भगवान् के नाम का स्मरण इस दृढ़ विश्वास के साथ करो कि उसमें तथा उसके नाम में कोई अन्तर नहीं है।

(२८) हरिनाम के जप से मन के सब विकार नष्ट होते हैं; वह परम सुख से पूर्ण हो जाता है। वह आत्मा को परमात्मा में लीन करके उसकी सत्ता का बोध कराता है।

(२९) प्रेम और भक्तिपूर्वक उसके नाम के गुण गाओ और अपना सब-कुछ उसको अर्पण करके उसकी शरण ले लो—यह सन्तों की वाणी और शास्त्रों का निर्णयात्मक अन्तिम वाक्य है।

(३०) भगवद्-गुणगान से चित्त दर्पण की भाँति शुद्ध हो जाता है, सारी वासनाएँ समाप्त हो जाती हैं और मन आनन्द-विभोर हो जाता है।

(३१) भगवन्नाम की ढाल द्वारा प्रलोभनों का मुकाबला

करो। एकान्तवास तथा मौनव्रत धारण करो और आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करो। तुम्हारे सारे दुःख और सङ्कटों का नाश हो जायेगा और तुम सबसे अधिक आनन्द पाओगे।

(३२) 'ॐ' भजो, 'ॐ नमः शिवाय' जपो। 'हरे राम, हरे कृष्ण' गाओ और इस प्रकार से अन्तर स्वर को झंकृत कर दो।

(३३) लगातार 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' का जप करो और उसकी अनुकम्पा और दर्शन प्राप्त करो।

(३४) भगवान् का नाम ही सर्व व्याधियों की औषधि है। केवल उस पर ही भरोसा करो। भगवान् का नाम अत्यन्त शक्तिशाली प्रकाश, बलकारक औषधि, सर्व रोगनाशक और सभी प्रकार अनुभव की हुई रसायन और सर्वोपरि औषधि है।

३. भगवन्नाम ही सब-कुछ है

(३५) नाम और नामी में कोई अन्तर नहीं है; अर्थात् भगवान् और भगवन्नाम दोनों का समान महत्त्व है।

(३६) नाम तुम्हें भगवान् का साक्षात् दर्शन करा सकता है।

(३७) नाम ही मार्ग है और नाम ही चरम लक्ष्य है।

(३८) भगवान् का नाम एक सुरक्षित नौका है, जिसके आश्रय में तुम अभय पा सकते हो, मुक्ति प्राप्त कर सकते हो तथा परमानन्द का अनुभव कर सकते हो।

(३९) भगवन्नाम सर्वोपरि पवित्रता का प्रदाता तथा प्रकाश देने वाला है।

(४०) भगवान् का नाम अज्ञान-रूपी अन्धकार का विनाशक है।

(४१) भगवान् का नाम सर्वसुखदाता है। वह नित्यानन्द और परम शान्ति प्रदान करने वाला है।

(४२) भगवन्नाम का प्रताप तथा महिमा अगम्य और अगोचर है।

(४३) भगवन्नाम अगणित तथा अपार शक्तियों का भण्डार है।

(४४) भगवन्नाम दीर्घायु देने वाला अमृत है।

(४५) संसार के सारे धनों से अधिक मूल्यवान् है भगवन्नाम।

(४६) भगवान् से भक्त को मिलाने वाला सेतु केवल भगवान् का नाम है।

(४७) मोक्षद्वार को खोलने की कुञ्जी तथा परमानन्द-प्राप्ति का साधन है भगवान् का नाम।

(४८) भगवन्नाम के बल पर हृदय ईश्वरीय प्रेम, प्रसन्नता तथा आनन्द से भर जाता है।

(४९) भगवन्नाम तुम्हारा मुख्याधार, समर्थक, रक्षक, धर्म-केन्द्र, आदर्श तथा विश्वास-स्थान है।

(५०) भगवन्नाम शान्ति, भक्ति और एकता स्थापित करता है।

(५१) भगवन्नाम का सहारा ग्रहण करो और निरन्तर भक्ति तथा भाव से एकाग्रचित्त हो कर उसका भजन करो। तुम्हारे सारे दुःख, विपत्तियाँ और विघ्न नष्ट हो जायेंगे।

४. अजपाजप

(५२) जिह्वा तथा होठों को हिलाये विना जो केवल मन

से जप किया जाता है वह अजपाजप है। यह श्वास-प्रश्वास के साथ होता है। साधारणतया अजपाजप का मन्त्र सोऽहम् है। मनुष्य इसको अनजान रूप से २४ घण्टे में २१,६०० बार जपता है। यदि तुम श्वास की स्वाभाविक गति को देखोगे तो तुम जान पाओगे कि श्वास अन्दर खीचने में "सो" और बाहर फेंकने में "हं" की ध्वनि निकलती है। बार-बार श्वास-प्रश्वास की गति का निरीक्षण करो और घण्टे भर अकेले बन्द कमरे में बैठ कर "सोऽहम्"—'मैं वह हूँ'—का ध्यान करो।

(५३) जिन मनुष्यों ने नौकरी से अवकाश ग्रहण कर लिया है, उन्हें राम-नाम का कम-से-कम प्रति दिवस ५०,००० जप करना चाहिए। वे इस क्रिया को ६ घण्टे में कर सकते हैं। उनको शान्ति, पवित्रता, शक्ति, आनन्द और भगवान् का दर्शन प्राप्त होगा।

(५४) जिनको गाने से प्रेम है, वह राम-मन्त्र अथवा अन्य मन्त्र गा सकते हैं। एकान्त में बैठ कर उसके नाम का जप करो, भाव-समाधि लग जायगी।

५. जप द्वारा भगवान् के दर्शन करने वाले भक्त

(५५) श्री नारद ऋषि के उपदेश 'राम-राम' का उलटा 'मरा-मरा' के जप करने से दुराचारी 'रत्नाकर' वाल्मीकि ऋषि बन गया।

(५६) भक्त तुकाराम ने, जो महाराष्ट्र के एक बड़े सन्त हुए हैं केवल 'विट्ठल, विट्ठल' शब्द का बार-बार जप करके भगवान् कृष्ण के दर्शन पाये।

(५७) भक्त श्रेष्ठ ध्रुव बालक ने भगवान् कृष्ण के द्वादशाक्षर-मन्त्र 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' का जप किया

और भगवान् का दर्शन पाया।

(५८) प्रह्लाद ने 'नारायण-नारायण' कहा और भगवान् को सम्मुख देखा।

(५९) भक्त रामदास ने, जो महाराजा शिवाजी के गुरु थे, तेरह करोड़ राम-मन्त्र अर्थात् 'श्रीराम जय राम जय जय राम' का उच्चारण किया। वह महान् सन्त बने।

(६०) प्रतिदिन कुछ घड़ी एकान्तवास करो। किसी से मत मिलो। अकेले बैठ कर अपने नेत्र मूँद लो। मन से प्रेम और भक्ति पूर्वक भगवान् का स्मरण करो। इस अभ्यास को लगातार जारी रखो। भगवान् के सान्निध्य की तुम्हें अनुभूति होगी और तुमको भगवद्दर्शन होंगे।

(१९) मन्त्र-दीक्षा की महिमा

आत्मानुभवी महात्माओं तथा ऋषियों को वेदों तथा उपनिषदों के प्राचीन काल में ईश्वर-सम्पर्क से जो सूक्ष्म से सूक्ष्म रहस्य प्राप्त हुए मन्त्र उन्हीं के विशेष रूप हैं। ये पूर्ण अनुभव के गुप्त देश में पहुँचाने वाले निश्चित साधन हैं। मन्त्र के सर्वश्रेष्ठ सत्य का ज्ञान जो हमें परम्परा से प्राप्त हो रहा है उसे प्राप्त करने से आत्मशक्ति मिलती है। गुरु-परम्परा की रीति के द्वारा यह मन्त्र अब तक इस कलियुग के समय में पीढ़ी दर पीढ़ी सन्तों में सीढ़ी व सीढ़ी उतरते चले आये हैं।

मन्त्र-दीक्षा पाने वाले के अन्तःकरण में एक बड़ा भयङ्कर परिवर्त्तन होना आरम्भ हो जाता है। दीक्षा लेने वाला इस परिवर्त्तन से अनभिज्ञ रहता है; क्योंकि उस पर मूल-अज्ञान

का परदा अब भी पड़ा हुआ है। जैसे एक गरीब आदमी को, जो अपनी झोंपड़ी में गहरी नींद में सोया हो, चुपचाप ले जा कर बादशाह के महल में सुन्दर कोच पर लिटा दिया जाये तो उसको इस परिवर्त्तन का कोई ज्ञान न होगा; क्योंकि वह गहरी नींद में सो रहा था। भूमि में बोये हुए बीज की भाँति आत्मानुभव आत्मज्ञान को सर्वोच्च शिखर पर पहुँचाता है। पूर्णरूप से फूलने-फलने के पूर्व जिस प्रकार बीज विकास के मार्ग में भिन्न-भिन्न अवस्था का अनुभव करता है और बीज से अंकुर, पौधा, वृक्ष और फिर पूरा वृक्ष बन जाता है उसी प्रकार साधक को आत्मानुभव में सफलता प्राप्त करने के लिए निरन्तर उत्साहपूर्वक प्रयत्न करना आवश्यक है। इस अवसर पर केवल साधक पर ही पूर्णतया उत्तरदायित्व है और गुरु में उसकी पूर्ण भक्ति और अचल विश्वास होने पर इस कार्य में उसको निःसन्देह गुरु की सहायता और कृपा मिलेगी। जिस प्रकार समुद्र में रहने वाली सीप स्वाति नक्षत्र में बरसने वाले जल की बूँद की उत्कण्ठा तथा धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करता है और स्वाति की बूँद मिलने पर उसको अपने में लय करता है; जिससे अमूल्य मोती अपने साहस और प्रयत्न से बना लेता है, उसी प्रकार साधक श्रद्धा और उत्कण्ठा से गुरु-दीक्षा की प्रतीक्षा करता है और कभी शुभ अवसर पर उससे मन्त्र प्राप्त करके अपनी धारणा का पोषण करता है और प्रयत्न तथा नियमपूर्वक साधन करके उससे ऐसी अद्भुत आत्मिक शक्ति प्राप्त करता है जो अविद्या तथा अज्ञान को छिन्न-भिन्न कर मुक्ति-द्वार का रास्ता स्पष्ट रूप से खोल देती है।

मन्त्र-दीक्षा से कितना अधिक गम्भीर तथा गुप्त परिवर्त्तन

होता है, इस बात का पता उस घटना से चलता है जब नारद ऋषि वैकुण्ठ में विष्णु भगवान् के यहाँ चले आये और लक्ष्मी-पति ने लक्ष्मी जी को जिस स्थान से नारद गुजरे थे उसको जल द्वारा शुद्ध करने की आज्ञा दी। उस बात का कारण जानने के लिए लक्ष्मी जी ने भगवान् से पूछा तो उन्होंने बताया कि नारद जी ने अभी गुरु-मन्त्र अर्थात् मन्त्र-दीक्षा प्राप्त नहीं की है और उनकी आन्तरिक हृदय-शुद्धि जो मन्त्र-दीक्षा से होती है अभी नहीं हुई है। मन्त्र-दीक्षा की अनुसन्धान-विधि आपको दैवी शक्ति प्रदान करती है। इस स्वर्णमयी शृङ्खला के एक छोर पर भगवान् अथवा सर्वोच्च परमानन्द-स्वरूप है और दूसरे छोर पर है अन्य अनुभव। अब आप समझ गये होंगे कि मन्त्र-दीक्षा का क्या अभिप्राय होता है।

मन्त्र-दीक्षा द्वारा आप सरल क्रियाओं को प्राप्त करते हैं। इसके द्वारा आप सर्वोच्च तथा सर्वश्रेष्ठ वस्तु का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं, जिसको पा कर सब-कुछ पा जाते हैं और जिसको जान कर सब-कुछ जान जाते हैं फिर अन्य कोई वस्तु जानने तथा पाने योग्य शेष नहीं रह जाती। मन्त्र-दीक्षा द्वारा आपको इस बात का पूर्ण ज्ञान तथा अनुभव हो जाता है कि आप मन या बुद्धि नहीं हैं वरन् आप सच्चिदानन्द परम प्रकाश और परमानन्द-स्वरूप हैं। सद्गुरु की अनुकम्पा से आपको भगवान् का दर्शन हो कर परम शान्ति उपलब्ध हो !

(२०) अनुष्ठान-परिचय

अनुष्ठान धार्मिक अथवा वेदोक्त आत्मसंयम के अभ्यास को कहते हैं। इसमें कुछ उद्देश्यों अथवा इच्छाओं की पूर्ति के विशेष नियमों की साधना करनी पड़ती है। इच्छा चाहे मोक्ष

प्राप्ति की क्यों न हो, परन्तु वह इच्छा ही है मगर वह साधारण रूप से इच्छाओं की गणना में नहीं आती है। अनुष्ठान करने वाला व्यक्ति अनुष्ठान के आदि से अन्त तक सांसारिक व्यवसायों से बिलकुल सम्बन्ध रखने वाला नहीं होता है। अभ्यासी को वेद अथवा शास्त्र द्वारा बताये हुए नियमों के पालन करने के केवल एक ही विचार में लीन होना चाहिए। कोई विचार उसके सम्मुख नहीं होना चाहिए। इस प्रकार नियम पालन करने से वह अपनी इच्छाओं तथा ममताओं से परे ध्यान की पूर्त्ति के योग्य बन जायगा।

भगवान् की निष्काम भाव से सेवा का अनुष्ठान ही आत्म-शुद्धि तथा मुक्ति-प्राप्ति का सर्वश्रेष्ठ उपाय है। इससे बढ़ कर दूसरा कोई अनुष्ठान नहीं है। अन्य अनुष्ठान सांसारिक तुच्छ वासनाओं की पूर्त्ति के लिए अज्ञानवश किये जाते हैं; वे आत्मोन्नति के लिए नहीं होते। आत्मिक अभ्यास का लक्ष्य ज्ञान प्राप्त करना और जीव को आवागमन के चक्र से मुक्त करना है।

अनुष्ठान का अभ्यास एक दिवस, सप्ताह, पक्ष, मास, अड़तालीस दिन, छियानबे दिन, ३ मास, ६ मास अथवा वर्ष-पर्यन्त किया जा सकता है। अभ्यासी की क्षमता तथा रुचि पर अभ्यास का समय निर्भर है। अभ्यासी अपनी परिस्थिति के अनुकूल कोई-सा अनुष्ठान ग्रहण कर सकता है।

प्रत्येक व्यक्ति की साधना की कठोरता उसके शारीरिक गठन तथा आरोग्यता पर निर्भर है। एक बीमार व्यक्ति को दिन में तीन बार स्नान करने की आवश्यकता नहीं है। एक कमजोर और अस्वस्थ मनुष्य को निराहार व्रत रखना आवश्यक नहीं है। एक पुराने रोगी को औषध-सेवन वर्जित नहीं है। सर्व साधनों में व्यावहारिक ज्ञान का विशेष स्थान है। कोई

दैवी नियम नहीं है। नियम सर्वदा स्थान, समय और परिस्थिति के अनुकूल बदल सकते हैं। मद्रास-प्रदेशीय साधक केवल एक लँगोटी पर शीत-काल में रह सकता है, परन्तु बरफ से ढकी गङ्गोत्तरी की चोटी पर साधक केवल लँगोटी लगा कर अभ्यास नहीं कर सकता। हिमालय पहाड़ की जलवायु त्रिवेन्द्रम् अथवा मद्रास की जलवायु के समान नहीं है। घोर वृष्टि के समय छाता लगाना अभ्यास में निषेध नहीं है। सभी साधन मन को दृढ़ संयमपूर्वक आधीन करने के लिए किये जाते हैं। उनका अभिप्राय केवल शारीरिक तपस्या ही नहीं है।

जूता पहन कर कैलास पर्वत के ऊपर बरफ की चट्टानों अथवा मानसरोवर पर चलना अनुष्ठान में हानिकारक नहीं होगा। शरीर-सम्बन्धी अपरिहार्य आवश्यकताएं अनुष्ठान में बाधक नहीं हैं। असाधारण लालसाएं साधना में विघ्न पैदा करती हैं, परन्तु सामान्य आवश्यकता कोई बाधा नहीं डालती। सभी साधकों की पूर्त्ति के लिए पूर्ण ब्रह्मचर्य की आवश्यकता है। अतः सत्य और अहिंसा नितान्त आवश्यक हैं, क्योंकि ये मानसिक संयम हैं।

कोई कार्य अन्तरात्मा के विरोध करने से साधक की दृढ़ता में सहायक नहीं होता। मानसिक कर्म ही वास्तविक कर्म है, शारीरिक कर्म नहीं। जो कोई भावना के प्रतिकूल कार्य करता है वह मिथ्याचारी है, उसको साधना का फल प्राप्त नहीं होगा। बुद्धि ही सारे कर्मों को करती-धरती है, शरीर तो औजार मात्र है। कार्य्य-स्वरूप वृक्ष को नष्ट करने से कारण-रूपी बीज को जो शक्तिपूर्वक बढ़ा रहे हो उसे नष्ट करने में कोई सहायता नहीं मिलती अर्थात् नष्ट नहीं

किया जा सकता। बुद्धि को शान्त और निश्चल करने के लिए सभी साधनों की शरण किसी-न-किसी रूप में लेनी पड़ती है अर्थात् सभी साधन किये जाते हैं।

जप-अनुष्ठान

पहले इष्ट-मन्त्र चुना जाता है। साधना का उद्देश्य चुने हुए मन्त्र की सीमा के अन्दर होना चाहिए। पुत्र-प्राप्ति के लिए किसी को हनुमान् जी के मन्त्र का जप नहीं करना चाहिए। किसी मनुष्य को दूसरे मनुष्य को मारने या पीड़ा पहुँचाने के लिए साधना नहीं करनी चाहिए। यह बड़ी मूर्खता की बात है; यदि इस प्रकार के साधक से दूसरा पुरुष अधिक बलवान् है तो साधक का स्वयं नाश हो जायगा। साधना के अभ्यास-काल में सर्वदा आत्मोन्नति पर दृष्टि रखनी चाहिए।

जप-साधना का अभ्यास किसी शुभ दिन प्रातःकाल ब्राह्म-मुहूर्त्त से आरम्भ करना चाहिए। पहले साधक को नदी अथवा कुएँ के जल से स्नान करना चाहिए। साधक को उस दिन के निश्चित किये हुए साधन की समाप्ति तक बिलकुल मौन रहना चाहिए। उस दिन का अधिक समय जप में लगाना चाहिए। साधक को सूर्य्यदेव का और अपने मन्त्र के देवता का स्तोत्र पढ़ना चाहिए। साधक को पवित्र स्थान पर पूर्व या उत्तर को मुख करके माला हाथ में ले कर बैठना चाहिए। अनुष्ठान का लक्ष्य हर समय दिमाग में होना चाहिए। पूर्ण-रूप से मौन धारण करना चाहिए। आँखें बन्द करनी चाहिए। इन्द्रियों को विषय से रोकना चाहिए। लक्ष्य के सिवाय और किसी ओर ध्यान नहीं करना चाहिए।

निश्चित् साधना का अभ्यास जब तक समाप्त न हो जाये, साधक को अपनी रुचि से किसी से नहीं मिलना चाहिए। रात्रि में आराम के समय अथवा अभ्यास-काल में स्त्री, पुत्र तथा धन-दौलत, जायदाद का चिन्तन नहीं करना चाहिए।

अनुष्ठान के पूर्ण होने के समय तक प्रतिदिन कम-से-कम एक व्यक्ति को भोजन कराना चाहिए। अन्तिम दिवस पर जप के दसवें भाग के तुल्य हवन करना चाहिए। अन्तिम दिन आत्मतुष्टि के लिए निर्धनों को भोजन कराना चाहिए। हवन की आहुतियों के बराबर जलतर्पण भी होना चाहिए और किसी कारण से ऐसा सम्भव न होवे तो जप की उतनी मात्रा में वृद्धि कर देनी चाहिए।

संक्षेप में कहें तो जप-अनुष्ठान सांसारिक वासनाओं से ऊपर उठ कर दीर्घकाल तक ध्यानपूर्वक जप करना है। इससे इष्ट-कार्य की सफलता होती है।

प्राय: उतने लाख जप किया जाता है जितने अक्षर मन्त्र में होते हैं; परन्तु जप का पूर्ण फल प्राप्त करने के लिए नियत गिनती से अधिक जप करना चाहिए। प्रायः मनुष्य का हृदय अपवित्र होता है और उसकी शुद्धि के लिए बड़े उत्कर्ष की आवश्यकता है; तब वह मन्त्र और उसके देवता के ध्यान के योग्य बन सकता है। चित्त को एकाग्र करने के लिए बहुत से पुरश्चरण की आवश्यकता है, तब ही लक्ष्य की सिद्धि हो पाती है। एक पुरश्चरण से इच्छित उद्देश्य सिद्ध नहीं होता; क्योंकि मनुष्य का चित्त हमेशा चञ्चल और रजस्-तमस् से भरा रहता है।

स्वाध्याय-अनुष्ठान

साधक वेद, महाभारत, रामायण, भगवद्गीता, इत्यादि शास्त्रों का अध्ययन आरम्भ करता है। भगवद्गीता के प्रसङ्ग में इसको सप्ताह बोलते हैं। वेदों के प्रसङ्ग में इसको अध्ययन बोलते हैं। शेष दो में इसको पारायण बोलते हैं। अनुष्ठान की क्रिया उपर्युक्त समय के साथ होनी चाहिए। जप-अनुष्ठान की भाँति स्वाध्याय में भी तर्पण और हवन होना चाहिए।

अन्य अनुष्ठान

सभी अनुष्ठान समयानुकूल किञ्चित् अदल-बदल के साथ इन्हीं रीतियों के अनुसार किये जा सकते हैं। स्त्री के लिए अनुष्ठान की विधि और साधना में कुछ अदल-बदल करना पड़ेगा। उनको मासिक-धर्म के दिनों में अनुष्ठान आरम्भ नहीं करना होगा और अभ्यास-काल के बीच मासिक-धर्म नहीं होना चाहिए। प्रायः उनको एक-एक मास से कम का अनुष्ठान करना चाहिए। अनुष्ठान-काल में उनको बच्चों को दूध नहीं पिलाना चाहिए। इस काल में स्त्रियों को भी ब्रह्मचर्यव्रत पालन करना चाहिए। उनको भी पुरुषों की तरह स्नान करना आवश्यक है। शेष सब नियम पुरुषों की भाँति उन पर भी पूर्ण-रूप से लागू हैं। स्त्रियों को गायत्री-जप तथा वेदाध्ययन का अनुष्ठान नहीं करना चाहिए। प्रायः शास्त्रों के अनुकूल अनुष्ठान का अभिप्राय जप और स्वाध्याय से है। ध्यान करना अनुष्ठान नहीं समझा जाता है। यह उससे ऊँची बात है।

ऊँची अवस्था पर पहुँच कर अनुष्ठान शब्द के अर्थ प्रत्यक्ष हो जाते हैं। पूजा भी एक प्रकार का अनुष्ठान माना जा

सकता है; परन्तु वास्तविक विचार से वह उसके अन्तर्गत नहीं होता। सारे अनुष्ठानों के नियम इस विषय पर एकमत हैं कि सांसारिक तथा पारिवारिक सब प्रकार के व्यवसायों तथा लगावों से पृथक् हो कर अनन्य प्रवृत्तिपूर्वक अनुष्ठान-साधन की पूर्त्ति में तत्पर होना चाहिए। साधक के चित्त में सांसारिक विचार तक नहीं आना चाहिए। अनुष्ठान एक बड़ा व्रत अथवा आत्मसंयम है, जिसकी पूर्त्ति भाव, श्रद्धा तथा सावधानी से करनी चाहिए।

अनुष्ठान के लिए समय-सीमा

अनुष्ठान के लिए कोई समय की अवधि नियत नहीं है। वह साधक की रुचि पर निर्भर है। वह केवल एक दिन के लिए भी किया जा सकता है। उसका अपना अलग प्रभाव है, परन्तु उसका अभ्यास दीर्घकाल तक करना चाहिए, ताकि इस अभ्यास में हृदय आज्ञाकारी बन जाये। जितना दीर्घ-कालीन अनुष्ठान रहेगा उतनी ही अधिक शक्ति प्राप्त होगी। वह स्वास्थ्य, सम्पत्ति, अभ्युदय, ज्ञान और शक्ति से सम्पन्न योगी की तरह हो जाता है। जो-कुछ वह चाहता है वह उसको प्राप्त होता है। अनुष्ठान रात्रि में भी पूरा किया जा सकता है। दिन में अनुष्ठान का साधन करने की अपेक्षा रात को अनुष्ठान करने से अधिक शक्ति प्राप्त होती है। रात्रि के समय चित्त शान्त और सांसारिक बाधाओं से मुक्त होता है। इसी कारण रात के सारे अभ्यास अधिक शक्तिदायक तथा संस्कार उत्पन्न करने वाले होते हैं।

उपसंहार

अनुष्ठान से मन योगाभ्यास के लिए योग्य बनता है।

चित्त आज्ञाकारी और ध्यान के योग्य बन जाता है। यह एक कठिन तपस्या है जो यदि किसी सांसारिक वासना के बिना किया जावे तो साधक को आत्मिक उन्नति के शिखर पर पहुँचाता है।

(२१) मन्त्र-पुरश्चरण-विधि

मन्त्र द्वारा विशेष लाभ प्राप्त करने के अभिप्राय से मन्त्र को स्वेच्छापूर्वक विशेष रीति से एक नियत गणना तक बार-बार जप करने को मन्त्र-पुरश्चरण कहते हैं। साधक को शास्त्रानुसार पुरश्चरण के विशेष नियम तथा उपनियमों का एवं आहारचर्या को भी तदनुकूल बना कर दृढ़तापूर्वक प्रतिपालन करना पड़ता है। इस प्रकार जब मन्त्र का मानसिक जप किया जावे, तो साधक को इच्छानुकूल जो-कुछ वस्तुएँ मन्त्र के अधिकार में हैं वे प्राप्त होती हैं। मन्त्र-पुरश्चरण-विधि संक्षेप में निम्नलिखित है।

आहार

साधक को मन्त्राभ्यास-काल में निम्नलिखित आहार भगवान् को अर्पण करने के पश्चात् करना चाहिए: शाक, फल, दूध, कन्दमूल, दही, जौ, घी के साथ पका हुआ चावल, मिश्री। जो साधक साधन-काल-पर्यन्त दूधाहारी रहेगा उसको केवल एक लक्ष जप से मन्त्र-सिद्धि प्राप्त हो सकेगी; लेकिन जो बताये हुए अन्य आहार करेगा उसको मन्त्र की सिद्धि तीन लक्ष जप के बाद होगी।

जप करने का स्थान

जप के लिए यह सब स्थान बतलाये जाते हैं। कोई

पवित्र तीर्थ-स्थान, गङ्गा आदि पवित्र नदी के तट, गुफा, पहाड़ की चोटी, पहाड़, नदी का सङ्गम, पवित्र घने जङ्गल और अशोक वृक्ष के नीचे, तुलसी-वाटिका, देवताओं के मन्दिर, समुद्र के किनारे और एकान्त स्थान में जप करना चाहिए। यदि इनमें से कोई स्थान सुविधापूर्वक प्राप्त न हो सके तो साधक को अपने निवास-स्थान में ही साधना करनी चाहिए।

लेकिन अपने घर के अन्दर किये हुए जप से केवल सामान्य-अवस्था में किये हुए जप का प्रभाव होगा। पवित्र स्थानों पर जप करने से शत-गुना प्रभाव होगा। नदी के किनारे किया हुआ एक लाख जप अगणित प्रभाव प्रकट करेगा।

दिशा

साधक को पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके बैठना चाहिए। रात्रि में साधक केवल उत्तर की ओर मुख करके बैठ सकता है।

स्नान

दिन में तीन बार स्नान करना चाहिए। यदि ऐसा सम्भव न हो सके तो सुविधा तथा परिस्थिति के अनुसार दो बार अथवा एक बार ही स्नान कर सकते हैं।

जप के लिए पद्म, सिद्ध, स्वस्तिक, सुख तथा वीर आसन प्रशस्त हैं। ऊनी वस्त्र, कम्बल, रेशम अथवा शेर की खाल आसन के लिए अत्यन्त उपयोगी है। इससे साधक को सौभाग्य, ज्ञान और सिद्धि शीघ्र प्राप्त होती हैं।

जपमाला का उपयोग

जप की गणना के लिए स्फटिक की माला, तुलसी की

माला अथवा रुद्राक्ष की माला काम में लायी जा सकती है। माला की प्रतिष्ठा और पूजा करनी चाहिए और उसे पवित्र तथा शुद्ध स्थान में रखना चाहिए।

जप करने की विधि

संसारी विषयों की ओर से मन को हटा कर मन्त्र के सूक्ष्म अर्थ को ध्यान में रखते हुए न तीव्र गति से और न अति-धीमी गति से जप करना चाहिए। मन्त्र का जप उतनी लाख बार करना चाहिए जितने मन्त्र के अक्षर हों। उदाहरण के तौर पर जैसे शिवजी के पञ्चाक्षर-मन्त्र का पाँच लाख बार और नारायण के अष्टाक्षर-मन्त्र का आठ लाख और कृष्ण भगवान् के द्वादशाक्षर-मन्त्र का बारह लाख जाप करना करना चाहिए। यदि कदाचित् ऐसा सम्भव न हो तो आधा ही किया जा सकता है; परन्तु किसी अवस्था में एक लाख से कम जप नहीं होना चाहिए।

प्राचीन काल में मनुष्यों के हृदय बड़े शुद्ध और शक्तिशाली होते थे। इस कारण सिद्धि-प्राप्ति तथा आत्म-साक्षात्कार के लिए लक्षाक्षर-जप की प्रथा प्रचलित थी। इस आधुनिक समय में मनुष्यों के हृदय अपवित्र होते हैं। इस कारण उनको केवल एक लक्ष जप से दर्शन नहीं भी हो सकता है। इस समय सिनेमा, नाटक तथा अन्य प्रकार के अनेक प्रचलित खेलों से मनुष्यों के विचार अशुद्धता से परिपूर्ण हैं। अतः स्पष्ट है कि वे उन्नति प्राप्त नहीं कर सकते। साक्षात्कार प्राप्त न होने तक उनको जप-पुरश्चरण जारी रखना चाहिए। कुछ मनुष्यों के लिए उनके विचारों की प्रारम्भिक शुद्धि के लिए कई पुरश्चरणों की आवश्यकता होती है। इनके उपरान्त

जो पुरश्चरण किया जाता है उससे भगवान् का दर्शन अथवा आत्म-साक्षात्कार प्राप्त होता है।

यदि इस पुरश्चरण के बाद भी मन्त्र सिद्ध न हो, तो समझना कि उसके पूर्व-जन्म के संस्कार खराब थे। इसलिए उसको अभ्यास नहीं छोड़ना चाहिए और पुनः-पुनः पुरश्चरण करना चाहिए। उसको पुनः पुनः अभ्यास करना चाहिए, जब तक कि विचार शुद्ध हो कर सिद्धि प्राप्त न हो जाये। सूर्य्यग्रहण तथा चन्द्रग्रहण के समय जप करने से अद्भुत प्रभाव होता है। इस कारण ऐसे अनायास अवसर को कभी खोना नहीं चाहिए।

वर्ष की छः ऋतुओं (शीतादि) में मनुष्य को जप दोपहर से पूर्व, दोपहर को, तीसरे पहर, अर्द्धरात्रि, प्रातःकाल और सन्ध्या समय करना चाहिए।

हवन अथवा यज्ञ

प्रति-दिवस जप की मात्रा एक-सी होनी चाहिए। कभी अधिक कभी कम नहीं होनी चाहिए। प्रतिदिन जप के पश्चात् अथवा सुविधानुसार एकलक्ष जप के अन्त में घी अथवा चरु से आहुति जप का दसवाँ भाग अग्नि में देना चाहिए। वेदों के ब्राह्मण, कल्प-सूत्र और स्मृति के बताये हुए दृढ़ नियमों के अनुसार हवन पूर्ण करना चाहिए। इस कार्य्य-व्यवस्था में किसी अनुभवी पुरोहित की सहायता लेनी चाहिए।

जब जप की गणना पूरी हो तब जप की गणना का १/१० आहुति यज्ञ में उसी मन्त्र के उच्चारण करते हुए देनी चाहिए।

यदि कोई मनुष्य हवन करने और उसके नियमों के पालन

में असमर्थ है तो इष्टदेव की पूजा करे; जप पूरा करने के अतिरिक्त पूरे जप का दसवाँ भाग और भी जप करे और महात्मा तथा ब्राह्मणों को भोजन कराये।

जप के मध्य में नियमों का पालन

भूमि पर शयन, ब्रह्मचर्य का पालन, दिन में तीन वार देवता की पूजा, प्रार्थना, मन्त्र पर श्रद्धा रखना, प्रति-दिवस तीन वार स्नान करना, तैल मर्दन न करना—ये सब नियम मन्त्र-साधन-काल में दृढ़तापूर्वक पालन करने चाहिए।

यदि साधना में सफलता चाहता है तो निम्नलिखित बातों का विचार रखना चाहिए। चित्त-उच्चाटन, दीर्घसूत्रता, जप के बीच थूकना, क्रोध, आसन से पैर फैलाना, अन्य देशों की भाषा बोलना, स्त्री आदि से तथा नास्तिक पुरुषों से वार्त्तालाप, पान खाना, दिन का सोना, उपहार लेना, नाच देखना, गाने सुनना, किसी को हानि पहुँचाना—ये सब बातें त्याग देनी चाहिए।

मन्त्र के पुरश्चरण-काल में नमक, माँस, चाट, बाजार की मिठाई, दालें, झूठ बोलना, अन्याय करना, अन्य देवताओं की पूजा, चन्दन लगाना, फूलों की माला धारण करना, मैथुन तथा मैथुन-सम्बन्धी बातें करना और इस प्रकार के पुरुषों के समागमन से बचना चाहिए।

साधक को एक पैर पर दूसरा पैर रख कर नहीं बैठना चाहिए। उसको अपने हाथों से पैर नहीं छूना चाहिए। हर समय मन्त्र और उसके अर्थ पर ध्यान को आकर्षित करना चाहिए। इधर-उधर घूमते [illegible] चित्त से जप नहीं करना

चाहिए। उपासक को चित्त में भी किसी अन्य कार्य को नहीं सोचना चाहिए। उसको गुनगुनाना और बड़बड़ाना भी नहीं चाहिए और न किसी वस्त्र से मुँह ढकना चाहिए।

जप-भङ्ग और उसकी शान्ति

चरित्रहीन की उपस्थिति में, छींक, अपान वायु के त्याग और जँभाई लेने के समय पर जप फौरन बन्द कर देना चाहिए। आचमन, प्राणायाम तथा सूर्य-दर्शन द्वारा पवित्र होने के बाद पुनः चालू करना चाहिए।

जप-समाप्ति

जप की निश्चित मालाएँ पूरी होने पर जप का दसवाँ भाग हवन, हवन का दसवाँ भाग तर्पण, तर्पण का दसवाँ भाग मार्जन तथा मार्जन का दसवाँ भाग ब्राह्मण-भोजन नियमित रूप से करना तथा कराना चाहिए। इस प्रकार मन्त्र-सिद्धि में अति-शीघ्र सफलता प्राप्त होगी।

यदि पुरश्चरण बिना स्वार्थपूर्ण बुद्धि अथवा उद्देश्य से किया है तो मन्त्र-सिद्धि होने पर तेज, पवित्रता, चित्तशान्ति और विषयों की ओर से अरुचि पैदा होगी। पूर्णतः दैवी प्रकृति का होने से साधक को हर जगह तेज दिखायी देगा और उसका शरीर प्रकाश से देदीप्यमान हो उठेगा। उसको हर जगह अपना इष्ट दिखेगा और प्रत्येक इच्छित वस्तु हस्तगत होगी।

नियम तो यह है कि आकांक्षी को किसी तुच्छ स्वार्थयुक्त उद्देश्य के लिए पुरश्चरण नहीं करना चाहिए। सकाम साधना से साधक को न आत्मज्ञान का अनुभव होगा, न आन्तरिक शक्ति की प्राप्ति हो। जप भगवान की प्राप्ति के हेतु करना चाहिए।

भगवान् के साक्षात् दर्शन से अधिक कोई बड़ी और पवित्र सिद्धि नहीं है। अतः मन्त्र-पुरश्चरण सब बन्धनकारक इच्छाओं को त्याग कर करना चाहिए। स्वर्ग-लोक की भी कामना मत करो। भगवान् की भक्ति करो और जप-पुरश्चरण उनके चरणों में अर्पण कर दो। जब भगवान् प्रसन्न हो जाते हैं तो तुम्हारे लिए कोई भी वस्तु अप्राप्य नहीं रहती। सबसे उत्तम पुरश्चरण वह है जो अपनी शुद्धि के लिए, आत्म-साक्षात्कार, भगवद्दर्शन तथा भगवत्प्राप्ति के लिए किया जाता है।

पञ्चम अध्याय

जपयोगियों की कथाएँ

विषय-प्रवेश

तुलसीदास, रामदास, कबीर, मीरावाई, बिल्वमङ्गल (सूरदास), गौराङ्ग महाप्रभु, गुजरात के नरसिंह मेहता आदि अनेक महात्माओं को जप और अनन्य भक्ति द्वारा ही भगवद्दर्शन हुए थे। जैसे इनको सफलता मिली वैसे ही, हे मित्रो! आपको मिल सकती है। जो गाना जानते हों वे लय के साथ मन्त्र का गान करें। मन इससे शीघ्र ही उन्नत अवस्था में पहुँच जायगा। जैसे बङ्गाली रामप्रसाद ने एकान्त में बैठ कर भगवान् के नाम का गान किया था वैसे ही बैठ कर आप भी गायें। गाते गाते भाव-समाधि आ जायेगी। जस्टिस उडरफ ने मन्त्र-शास्त्र पर वर्णमाला (Garland of letters) नामक एक बड़ी सुन्दर पुस्तक लिखी है उसे पढ़ कर आपको मन्त्र की शक्ति का ज्ञान हो जायगा।

इस कलिकाल में भगवत्प्राप्ति तो बहुत अल्प काल में हो सकती है। यह भगवान् की कृपा का फल है जो आपको कड़ी तपस्या भी नहीं करनी पड़ती। प्राचीन समय की तरह इस युग

में १००० वर्षों तक एक पैर पर खड़े रहने की भी आवश्यकता नहीं है। आप जप, कीर्त्तन तथा प्रार्थना द्वारा भगवद्दर्शन कर सकते हैं।

मैं फिर कहता हूँ कि किसी भी मन्त्र के जप में मन को शुद्ध करने की बड़ी शक्ति है। भगवान् के नाम में बड़ी शक्ति है। जप करने से मन अन्तर्मुख हो जाता है और वासनाएँ क्षीण हो जाती हैं। वासना इच्छा का वह मूल बीज है जो इच्छा का सञ्चालन करता है। इसको गुप्त प्रवृत्ति भी कहते हैं। मन्त्र का जप सङ्कल्पों के वेग को कम कर देता है। जप मन को स्थिर करता है। मन तनुमानसी अर्थात् सूत की तरह हो जाता है। मन सत्वगुण से पूर्ण हो जाता है जिसके फल-स्वरूप शान्ति, पवित्रता और शक्ति आती है और इच्छाशक्ति प्रबल हो जाती है।

१. ध्रुव

प्रथम मनु के पुत्र उत्तानपाद की दो स्त्रियाँ थीं, सुरुचि और सुनीति। सुरुचि के पुत्र का नाम उत्तम था और सुनीति के पुत्र का नाम था ध्रुव। एक दिन उत्तम अपने पिता उत्तानपाद की गोद में बैठे थे। इतने में ध्रुव भी पिता के पास आये और उनकी गोद में बैठना चाहा। उत्तम की माता सुरुचि के डर से उत्तानपाद ने ध्रुव को गोद में उठाने के लिए हाथ तक न बढ़ाया और सुरुचि ने तो ध्रुव को ताना मारा। सौतेली माता के वचनों से ध्रुव के कोमल हृदय में चोट लगी और दुःखी होकर वे सीधे अपनी माता के पास गये और उन्होंने सब हाल कहा। सुनीति ने अपने पाँच वर्ष के पुत्र को तप करने की सलाह दी। अपनी माता के आज्ञानुसार ध्रुव

तुरन्त तप करने के लिए घर से निकल पड़े। राह में उन्हें नारद जी मिले। नारद ने ध्रुव का अभिप्राय जान कर उनसे कहा—"बेटा ध्रुव! अभी तुम अबोध बालक हो। जिसकी प्राप्ति कठिन योगाभ्यास, ध्यान और जितेन्द्रियता द्वारा कई जन्मों में की जाती है उसे तुम कैसे पा सकोगे? अभी तुम ठहरो। जब तुम संसार के सुखों का भोग कर लो और जब तुम वृद्ध हो जाओ तभी तुम प्रयत्न करना।" किन्तु ध्रुव अपने सङ्कल्प पर दृढ़ रहे और उन्होंने नारद जी से दीक्षा पाने का आग्रह किया। ध्रुव को दृढ-प्रतिज्ञ देख कर नारद जी ने द्वादशाक्षर-मन्त्र का उपदेश दे कर मथुरा में जा कर तप करने की आज्ञा दी और कहा कि भगवान् मथुरा में गुप्त रूप से सदा वास करते हैं। ध्रुव ने मथुरा में पहुँच कर घोर तपस्या करना आरम्भ कर दिया। वे एक पैर पर खड़े रह-कर और केवल हवा पी कर तप करने लगे। अन्त में ध्रुव ने श्वास पर विजय पा ली और गम्भीर ध्यान द्वारा उन्होंने हृदय में निरञ्जन ज्योति के दर्शन कर लिये। भगवान् ने हृदय से उस ज्योति को खींच लिया तो ध्रुव की समाधि टूट गयी और आँख खोलते ही उन्हें सामने भगवान् के दर्शन हो गये। प्रसन्नता के मारे ध्रुव अवाक् रह गये। भगवान् ने ध्रुव से कहा—"हे क्षत्रिय बालक! मैं तेरी प्रतिज्ञा जानता हूँ। तुम बड़े समृद्धशाली होगे। मैं तुम्हें वह स्थान देता हूँ जहाँ सदा मुक्ति रहती है। वह चारों तरफ से नक्षत्र-मण्डल से घिरा है। एक कल्प तक जीवित रहने वाले की मृत्यु हो जायेगी, किन्तु वह स्थान अक्षय रहेगा। धर्म, अग्नि, कश्यप, इन्द्र और सप्तर्षि तथा अन्य तेजस्वी नक्षत्र सदा उस स्थान की परिक्रमा लगाया करते हैं। तुम अपने पिता के बाद राज-

सिंहासन पर बैठोगे और ३६,००० वर्ष राज्य करोगे। तुम्हारा भाई उत्तम एक वन में जा कर अदृश्य हो जायेगा। अपने पुत्र को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते तुम्हारी विमाता जङ्गल में मर जायगी। अन्त में तुम हमारे उस स्थान पर आओगे जो ऋषियों और देवताओं के सब स्थानों से ऊपर है और जहाँ पहुँच कर फिर कोई वापस नहीं आता।

तप करने के बाद ध्रुव घर लौट आये। उनके पिता ध्रुव को राजसिंहासन दे कर तप करने जङ्गल में चले गये। शिशुमार की लड़की ब्रह्मी के साथ ध्रुव का विवाह हुआ और कल्प और वत्सर नामक उनके दो पुत्र हुए। इला नामक दूसरी स्त्री से उनके उत्कल नामक एक और पुत्र हुआ। जङ्गल में आखेट करते समय उत्तम एक यक्ष द्वारा मारा गया। अपने भाई के मारे जाने का बदला लेने के लिए ध्रुव ने उत्तर देश पर चढ़ाई की। युद्ध में हजारों निर्दोष यक्ष और किन्नर मारे गये। मनु को यक्षों पर बड़ी दया आयी और उन्होंने स्वयं आ कर अपने पौत्र को युद्ध करने से रोका। ध्रुव ने मनु जी की आज्ञा का पालन किया। इस पर यक्षों के राजा कुबेर ध्रुव से प्रसन्न हुए और आशीर्वाद दिया। ३६,००० वर्षों तक पृथ्वी पर राज्य करके सनन्द और नन्द नामक दो विष्णु-पार्षदों के साथ रथ पर चढ़ कर अक्षय विष्णुपद को चले गये।

२. अजामिल

अजामिल एक ब्राह्मण का पुत्र था। वह बड़ा कर्त्तव्य-परायण, पुण्यात्मा, विनयशील, सत्यवादी और वैदिक क्रिया-कलापों को नियमपूर्वक नित्य करता था। एक दिन पिता के

आज्ञानुसार वह पूजन के लिए फल, फूल, समिधा और कुश लाने जङ्गल में गया। लौटते समय रास्ते में उसे एक शूद्र के साथ एक दस्यु-कन्या मिली। बहुत रोकने पर भी अजामिल दस्यु कन्या पर मोहित हो गया। उस दस्यु कन्या को पाने के लिए उसने अपनी सारी पैतृक सम्पत्ति खर्च डाली और अन्त में अपनी विवाहिता स्त्री को छोड़ कर उस दस्यु कन्या को रख लिया। उस शूद्रा से उसके कई पुत्र हुए जिनमें सबसे छोटे का नाम नारायण था। बुरी सङ्गति में पड़ कर अजामिल अपने गुणों और पुण्य कर्मों को भूल बैठा। अपनी नववधू और बच्चों का पालन करने के लिए वह बड़े पाप-कर्म करने लगा। अजामिल अपने सबसे छोटे पुत्र नारायण को बहुत प्यार करता था। यह जानते हुए भी कि उसका अन्त समय आ पहुँचा उसका मन अपने सबसे छोटे लड़के नारायण में लगा हुआ था जो उस समय कुछ दूर पर खेल रहा था। इतने में उसे हाथ में यम-फाँस लिये तीन कराल यमदूत आते दीख पड़े। उनको देखते ही डर के मारे अजामिल ने अपने छोटे लड़के को "नारायण" "नारायण" कह कर बुलाया। नारायण का नाम मुँह से निकलते ही उसी क्षण वहाँ विष्णु-पार्षद प्रकट हुए। जिस समय यमदूत अजामिल के जीवात्मा को शरीर से खींच रहे थे विष्णु-पार्षदों ने कठोर स्वर में उन्हें मना किया। उन्होंने विष्णु-पार्षदों से पूछा कि हमारे इस उचित धर्म में वाधा डालने वाले आप कौन हैं? इस पर तेजस्वी विष्णु-पार्षदों ने हँस कर पूछा—"धर्म क्या है? क्या तुम्हारे स्वामी यमराज को सब कर्म करने वाले जीवों को दण्ड देने का अधिकार है? क्या इस काम में कोई भेदभाव नहीं है?"

यमदूतों ने उत्तर दिया — वेद के अनुशासनों का अनुष्ठान

ही धर्म है और उनकी अवहेलना ही अधर्म है। इस अजामिल ने अपने आरम्भिक जीवन में वैदिक आज्ञाओं का श्रद्धापूर्वक पालन किया; किन्तु शूद्रा स्त्री के संसर्ग में पड़ कर यह ब्राह्मणत्व से च्युत हो गया, वेदाज्ञाओं की अवहेलना की और ब्राह्मणोचित कर्मों के विपरीत आचरण करने लगा। अतः इसका यमराज के पास दण्ड पाने के लिए पहुँचना उचित ही है।"

यह सुन कर विष्णु-पार्षदों ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—"तुम उनके नौकर हो जो धर्मराज कहलाते हैं और तुम्हें यह भी नहीं मालूम कि वेदों के ऊपर भी कोई पदार्थ है। इस अजामिल ने, जान कर हो या अनजाने में, मरते समय नारायण का नाम लिया है और अब यह तुम्हारे पञ्जे से छूट गया। जैसे अग्नि का धर्म ईंधन को भस्म करना है वैसे ही नारायण के नाम में पापों को भस्म करने का गुण है। यदि कोई अनजाने कोई तीव्र औषधि खा ले तो क्या उसका प्रभाव नहीं पड़ता? अजामिल ने चाहे अपने लड़के को बुलाने के लिए ही नारायण का नाम तो अवश्य लिया है। अतः अब आप लोग विदा हों।"

३. एक चेले की कथा

विश्वास का चमत्कार

किसी विशाल नदी के तट पर एक मन्दिर में एक महान् गुरु जी रहते थे। सारे देश में उनके सैकड़ों-हजारों चेले थे। एक बार अपना अन्त समय जान कर गुरु जी ने अपने सब चेलों को देखने के लिए बुलाया। गुरु जी के विशेष कृपापात्र,

शिष्यगण, जो सदा उनके समीप ही रहते थे, चिन्तित हो कर रात और दिन उनके पास ही रहने लगे। उन्होंने सोचा कि न मालूम गुरु जी अपना वह भेद, जिसके कारण वे इतना पूजे जाते हैं, कब और किसके सामने प्रकट कर दें। अतः अवसर न जाने देने के लिए रात-दिन शिष्यगण उन्हें घेरे रहने लगे। वैसे तो गुरु जी ने अपने शिष्यों को अनेक मन्त्र बतलाये थे, किन्तु शिष्यों ने उनसे कोई चमत्कार नहीं प्राप्त किया था। अतः उन्होंने सोचा कि सिद्धि प्राप्त करने के उपाय को गुरुजी छिपाये ही हैं जिसके कारण गुरु का इतना मान है। गुरु जी के दर्शनों के लिए चेले बड़ी दूर से आये और बड़ी आशा लगाये रहस्योद्‌घाटन की राह देखने लगे।

एक बड़ा नम्र चेला था जो नदी के दूसरे तट पर रहता था, वह भी गुरु जी का अन्त समय जान कर दर्शनों के लिए आया; किन्तु उस समय नदी बढ़ी हुई थी और धार इतनी तेज थी कि नाव भी नहीं चल सकती थी। चेले ने सोचा जो भी हो उसे चलना ही होगा; क्योंकि कहीं ऐसा न हो कि बिना दर्शन दिये ही गुरु जी का देहान्त हो जाय। उसे सङ्कल्प-विकल्प नहीं करना चाहिए, किन्तु प्रश्न यह था कि वह नदी कैसे पार करे। वह जानता था कि गुरु जी ने जो मन्त्र उसे दिया है वह बड़ा शक्तिशाली है और उसमें सब-कुछ करने की शक्ति है। ऐसा उसका पक्का विश्वास था। ऐसा विश्वास करके मन्त्र जपता हुआ वह श्रद्धापूर्वक नदी के जल पर पाँव-पाँव चल कर आया। गुरु जी के सब चेले शिष्य की चमत्कारिक शक्ति देख कर चकित हो गये। उन्हें उस शिष्य को पहचानते ही याद आयी कि बहुत दिन हुए जब यह शिष्य गुरु जी के पास आया था और केवल एक दिन रह कर चला गया था। अब

सब चेलों ने सोचा कि अवश्य गुरु जी ने उसी शिष्य को मन्त्र का रहस्य बतलाया है। अब तो सब चेले गुरु जी पर बहुत बिगड़े और उन्होंने कड़ाई के साथ पूछा : "आपने हम सबको धोखा क्यों दिया ? हम सबने वर्षों आपकी सेवा की और बराबर आपकी आज्ञाओं का पालन किया, किन्तु मन्त्र का रहस्य आपने एक ऐसे अज्ञात शिष्य को दिया जो केवल एक दिन, सो भी बहुत दिन हुए, आपके पास रहा ।"

गुरु जी ने मुसकरा कर सब चेलों को शान्त किया और नवागत नम्र शिष्य को पास बुला कर आज्ञा दी कि वह उपदेश जो उन्होंने उस शिष्य को बहुत दिन हुए दिया था, उपस्थित शिष्यों को सुनाये। जब गुरु जी की आज्ञा पा कर शिष्य ने "कुडु-कुडु" शब्द का उच्चारण किया तो बड़ी श्रद्धा, भक्ति और उत्सुकतापूर्वक सुनने वाली शिष्य-मण्डली चकित हो कर अवाक् रह गयी। अब गुरु जी बोले—"देखा, इन शब्दों में इस सरल चित्त शिष्य को विश्वास था कि गुरु जी ने सारी शक्ति का भेद बतला दिया है। जिस विश्वास, एकाग्रता और भक्ति से इसने मन्त्र का जप किया था उसका फल भी इसे मिल गया; किन्तु तुम्हारा चित्त सदा सन्दिग्ध ही रहा और सदा तुम लोग यही सोचते रहे कि गुरु जी अभी कुछ छिपाये ही हैं यद्यपि मैंने तुम्हें बड़े चमत्कारपूर्ण मन्त्रों का उपदेश दिया था। इन विचारों ने तुम्हारे मन को एकाग्र न होने दिया; क्योंकि छिपे रहस्य का सन्देह तुम्हारे मन को चञ्चल किये था। तुम सदा मन्त्र की अपूर्णता की बात सोचा करते थे । अनजाने भूल से जो तुमने अपूर्णता पर ध्यान जमाया तो फलस्वरूप तुम भी अपूर्ण ही रह गये।"

परिशिष्ट

१—भगवन्नाम की महिमा

(सङ्कलन)

भगवन्नाम की महिमा-सम्बन्धी कोई ऐसी गूढ़ से गूढ़ बात नहीं है जिसे गोस्वामी तुलसीदास न बतला गये हों। इस संसार-पङ्क में फँसे हुए लोगों को पवित्र द्वादशाक्षर या अष्टाक्षर मन्त्रों के जप से निश्चय ही तथा निस्सन्देह बड़ी शान्ति मिलती है। जिसे जिस मन्त्र से लाभ या सुख मिले उसे उसी का सहारा लिये रहना चाहिए; किन्तु उन लोगों को जिन्हें कहीं शान्ति नहीं मिलती राम-नाम का जप करना चाहिए। उन्हें इस जप से आश्चर्यपूर्ण लाभ होगा। भगवान् के हजारों तो क्या अनन्त नाम हैं। उनकी महिमा अवर्णनीय है। जब तक प्राणी का शरीर से सम्बन्ध है उसके लिए भगवन्नाम ही एक सर्वोत्तम आधार है। इस कलिकाल में अज्ञानी और मूर्ख मनुष्य भी दो अक्षर वाले राम-नाम का आधार ले सकता है। दो अक्षर वाला 'राम' शब्द उच्चारण करने पर एक ही शब्द के रूप में निकलता है और सत्य तो यह है कि 'राम' और प्रणव में कोई अन्तर नहीं है।

बुद्धि और तर्क भगवान् के नाम की यथार्थ महिमा कह सकने में सर्वथा असमर्थ हैं। श्रद्धा और विश्वास द्वारा ही भगवन्नाम की महिमा का वास्तविक अनुभव किया जा सकता है।

—श्री महात्मा गान्धी

भगन्नाम के लिए एक बार भी जब तुम्हारे भीतर आदर तथा रुचि उत्पन्न हो जाय, तब तो फिर तुम्हें उसके सम्बन्ध में किसी तर्क अथवा सोच-विचार या नियम-सम्बन्धी बन्धन के विचार की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। नाम-सङ्कीर्त्तन द्वारा सब तरह के सन्देह स्वयं नष्ट हो जाते हैं, हृदय शुद्ध हो जाता है और स्वयं ईश्वर के ज्ञान का प्रादुर्भाव भी हो जाता है।

प्रात:काल और सायङ्काल हाथ की ताली तालपूर्वक बजा कर हरि-कीर्त्तन करने से सब तरह के पाप नष्ट होते हैं। तालपूर्वक हरि-कीर्त्तन करते ही अज्ञान की जो शक्तियाँ तुम्हारे हृदय में पापपूर्ण विचारों को उत्पन्न किया करती हैं वे सब नष्ट हो जायेंगी।

जाने-अनजाने में या भूल से किसी भी तरह भगवान् का नाम मुँह से निकलने से उसका पुरस्कार अवश्य मिलता है। जो मनुष्य जान कर नदी में स्नान करने जाता है या जो भूल कर फिसल कर नदी में गिर पड़ता है और एक वह मनुष्य जो खाट पर पड़ा हो और किसी ने भी वहीं एक डोल पानी उस पर डाल दिया हो तो जहाँ तक स्नान का सम्बन्ध है उक्त तीनों प्रकार के मनुष्य नहाये ही कहे जायेंगे।

किसी भी तरह क्यों न हो अमृत-कुण्ड में तो एक भी गोता लगाने से मनुष्य अमर हो जाता है। एक वह मनुष्य जो बड़ा पाखण्ड दिखाने के बाद गोता लगाये और एक वह जो अनिच्छा से कुण्ड में ढकेल दिया जाय, किन्तु इच्छा या अनिच्छा वाले दोनों को फल तो समान रूप से ही मिलेगा। इसी तरह इच्छापूर्वक, अनिच्छापूर्वक या भूल से लिये जाने पर भी हरि-नाम अपना प्रभाव अवश्य दिखलाता है।

पहले लोगों को साधारण ज्वर आता था जो साधारण उपचार से अच्छा हो जाता था, किन्तु जब से मलेरिया ज्वर चला है तब से उपचार भी तदनुरूप ही कड़ा हो गया है। प्राचीन समय में लोग यज्ञ-यागादि करते थे, योग की क्रियाएँ तथा कठोर तप करते थे; किन्तु कलियुग में मनुष्य का जीवन भोजन पर ही निर्भर है और मन भी बड़े दुर्बल हैं। इसलिए संसार के सब प्रकार के कष्टों के निवारण के लिए एकाग्र हो कर हरि-नाम का सङ्कीर्त्तन करना चाहिए।

—श्री रामकृष्ण परमहंस

वह प्राणी धन्य है जो बिना किसी विघ्न-बाधा के श्रीराम-नाम-रूपी अमृत का पान करता है, जो वेद-रूपी महासागर को मथ कर निकाला गया है, जिससे कलि के मल नष्ट होते हैं, जो सदा श्रीशिवजी की रसना पर रहता है, जो सांसारिक जीवन-रूपी महारोग की अचूक रामबाण दवा है और जो माता जानकी का प्राणाधार है।

नाम की महिमा भगवान् से भी अधिक है, क्योंकि सगुण और निर्गुण दोनों प्रकार के ब्रह्म का ज्ञान और रस का आस्वादन नाम की शक्ति द्वारा मिलता है। राम ने तो केवल

एक ही नारी अहल्या का उद्धार किया; किन्तु नाम ने तो करोड़ों ही अधम लोगों को तारा। राम ने तो शबरी और जटायु, दो ही भक्तों को मुक्ति दी; किन्तु उनके नाम ने तो असंख्य पापियों को तार दिया। छः महीने केवल दूध पी कर चित्रकूट में रह कर अविचल भक्ति और एकाग्र मन से राम-नाम जप करने से तुम्हें श्रीराम के प्रत्यक्ष दर्शन होंगे, सर्व सिद्धियाँ प्राप्त होंगी, भगवान् से सब तरह के बरदान प्राप्त होंगे।

वह पुत्र धन्य है जो किसी भी तरह राम-नाम लेता है, उसके माता-पिता भी धन्य हैं जिनके ऐसी सन्तान हुई हो। वह चण्डाल धन्य है जो रात और दिन राम का नाम लेता है। उस उच्च वंश में जन्म लेने से क्या लाभ जहाँ कोई राम का नाम ही न ले! पर्वतों के उच्चतम शिखरों पर केवल विषधरों को ही परित्राण मिलता है। मामूली खेतों और मैदान में उत्पन्न होने वाले अन्न, गन्ना और पान के पत्ते धन्य हैं जिनसे असंख्य प्राणियों को सुख मिलता है।

मधुर और मोहक 'रा' और 'म' दोनों वर्ण वर्णमाला की दो आँखो के समान हैं जो भक्तों के प्राणाधार हैं। उन्हें स्मरण करना कितना सरल है और वे सबको सुख देने वाले हैं। इस लोक में भी राम-नाम से लाभ मिलता है और पर-लोक में भी ये हमारा पालन करते हैं।

उस राम-नाम की जय हो जिससे इतना भला होता है। जिसके निरन्तर जपने में शान्ति, अनन्त सुख और अमृत का भक्तों को आस्वादन मिलता है, वह राम-नाम धन्य है।

—श्री तुलसीदास

अहो इस संसार के कुपथगामी मनुष्यों की यह कैसी भाग्य विडम्बना है कि उस राम-नाम को वे नहीं लेते जिसमें संसार के जन्म-मृत्यु-रूपी चक्र से मुक्ति करने की शक्ति है। राम-नाम लेने में तनिक भी तो बल नहीं लगता, कानों को यह नाम कैसा मधुर लगता है! किन्तु कैसे दुःख की बात है कि कुपथगामी मनुष्य तब भी इस अनुपम राम-नाम को स्मरण नहीं करते। कितने खेद की बात है! जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति पाना प्रत्येक मरणशील मनुष्य के लिए कितना कठिन है सो सभी जानते हैं, किन्तु वही मुक्ति श्रीराम-नाम के कीर्त्तन से सरलतापूर्वक मिल सकती है। क्या मनुष्य के लिए राम-नाम जप करने की अपेक्षा और भी कोई कार्य अधिक महत्त्वपूर्ण हो सकता है? द्विजन्मा लोगों में श्रेष्ठ हे जैमिनि! मरते समय राम-नाम लेने से बड़े-से-बड़ा पापी भी मुक्ति पा सकता है। हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! राम-नाम सब पापों को दूर रखता है, सब कामनाएँ पूरी करता है और अन्त में मुक्ति देता है, अतः जिनमें जरा भी विवेक-बुद्धि है उन्हें निरन्तर राम-नाम का जप करना चाहिए। हे ब्राह्मण! मैं तुमसे सत्य ही कहता हूँ, जीवन का जो क्षण बिना राम-नाम स्मरण किये जाता है वह व्यर्थ है। सत्य को पहचानने वाले महात्मा चिल्ला-चिल्ला कर कह रहे हैं कि वही रसना रसना है जिसने राम-नाम-रूपी पीयूष का रसास्वादन किया है। मैं तुमसे बार-बार सत्य ही कहता हूँ कि राम-नाम के निरन्तर जपने वाले पर कभी कोई विपत्ति नहीं आती। जो करोड़ों जन्मों के सञ्चित पाप की राशियों को नष्ट करना चाहते हों, जो संसार में अपार सम्पत्ति पाना चाहते हों उन्हें सर्व कल्याणकारक मधुर राम-नाम भक्तिपूर्वक निरन्तर लेना चाहिए।

—श्री व्यास

२. राम-नाम की महिमा

बन्दउँ नाम राम रघुवर को। हेतु कृसानु भानु हिमकर को ।।
बिधि हरि हरमय वेद प्रान सो । अगुन अनूपम गुन निधान सो ।।

मैं श्री रघुनाथ जी के नाम 'राम' की वन्दना करता हूँ, जो कृशानु (अग्नि), भानु (सूर्य) और हिमकर (चन्द्रमा) का हेतु अर्थात् 'र', 'आ' और 'म' रूप से बीज है। वह 'राम'-नाम ब्रह्मा, विष्णु और शिव-रूप है। वह वेदों का प्राण है; निर्गुण, उपमारहित और गुणों का भण्डार है।

महामन्त्र जोइ जपत महेसू । कासी मुकुति हेतु उपदेसू ।।
महिमा जासु जान गनराऊ । प्रथम पूजिअत नाम प्रभाऊ ।।

जो महामन्त्र है, जिसे महेश्वर श्री शिवजी जपते हैं और उनके द्वारा जिसका उपदेश काशी में मुक्ति का कारण है तथा जिसकी महिमा को गणेश जी जानते हैं, जो इस 'राम'-नाम के प्रभाव से ही सबसे पहले पूजे जाते हैं।

जान आदिकबि नाम प्रतापू । भयउ सुद्ध करि उलटा जापू ।।
सहस नाम सम सुनि सिव बानी । जपि जेई पिय सङ्ग भवानी ।।

आदिकवि श्री वाल्मीकि जी राम-नाम के प्रताप को जानते हैं, जो उलटा नाम ('मरा'-'मरा') जप कर पवित्र हो गये। श्री शिवजी के इस वचन को सुन कर कि एक राम-नाम सहस्र नाम के समान है, पार्वती जी सदा अपने पति (श्री शिवजी) के साथ राम-नाम का जप करती रहती हैं।

नर नारायण सरिस सुभ्राता । जग पालक बिसेषि जन त्राता ।।

ये दोनों अक्षर नरनारायण के समान सुन्दर भाई हैं।

ये जगत् का पालन और विशेष रूप से भक्तों की रक्षा करने वाले हैं।

राम नाम मनिदीप धरु जीह देहरीं द्वार।
तुलसी भीतर बाहिरेहुँ जौं चाहसि उजिआर॥

तुलसीदास जी कहते हैं, यदि तू भीतर और बाहर दोनों ओर उजाला चाहता है तो मुख-रूपी द्वार की जीभ-रूपी देहली पर राम-नाम-रूपी मणि-दीपक को रख।

जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ। नाम जीहँ जपि जानहिं तेऊ॥
साधक नाम जपहिं लय लाएँ। होहिं सिद्ध अनिमादिक पाएँ॥

जो परमात्मा के गूढ़ रहस्य को (यथार्थ महिमा को) जानना चाहते हैं वे (जिज्ञासु) भी नाम को जीभ से जप कर उसे जान लेते हैं। साधक (लौकिक सिद्धियों के चाहने वाले अर्थार्थी) लौ लगा कर नाम का जप करते हैं और अणिमादि (आठों) सिद्धियों को पा कर सिद्ध हो जाते हैं।

जपहिं नामु जन आरत भारी। मिटहिं कुसङ्कट होहिं सुखारी॥

आर्त भक्त (सङ्कट से घबड़ाये हुए) नाम-जप करते हैं तो उनके बड़े भारी बुरे-बुरे सङ्कट मिट जाते हैं और वे सुखी हो जाते हैं।

राम भगत हित नर तनुधारी। सहि सङ्कट किए साधु सुखारी॥
नाम सप्रेम जपत अनयासा। भगत होहिं मुद मङ्गल बासा॥

श्री रामचन्द्र जी ने भक्तों के हित के लिए मनुष्य-शरीर धारण करके स्वयं कष्ट सह कर साधुओं को सुखी किया; परन्तु भक्तगण प्रेम के साथ नाम का जप करते हुए सहज ही में आनन्द और कल्याण के घर हो जाते हैं।

सुक सनकादि सिद्ध मुनि जोगी । नाम प्रसाद ब्रह्मसुख भोगी ।।

शुकदेव जी और सनकादि सिद्ध, मुनि, योगीगण नाम के ही प्रसाद से ब्रह्मानन्द को भोगते हैं ।

नारद जानेऊ नाम प्रतापू । जग प्रिय हरि हरि हर प्रिय आपू ।।

नारद जी ने नाम के प्रताप को जाना है । हरि सारे संसार को प्यारे हैं, (हरि को हर प्यारे हैं) और आप (श्री नारद जी) हरि और हर दोनों को प्रिय हैं ।

३. दृष्टि में परिवर्त्तन करो

बुराई को भलाई में परिवर्त्तन करने के चार साधन हैं । जो इन लाभदायक साधनों का उपयोग करता है उसकी दृष्टि बुराई से हट जाती है । उसे कुसङ्गति की शिकायत कभी नहीं होती । तुम्हें इन साधनों का नित्य अभ्यास करना चाहिए ।

१—स्मरण रखो कि कोई भी आदमी पूर्णतः बुरा नहीं होता । अतः प्रत्येक मनुष्य की अच्छाई देखने का प्रयत्न करो । भलाई ढूंढ़ने का स्वभाव डालो । बुराई ढूंढ़ने की बुरी आदत को हटाने के लिए यह आदत अद्भुत काम करेगी ।

२—प्रथम कोटि का गुण्डा भी सम्भावी साधु होता है । वह भविष्य का सन्त होता है । इस बात को सदा याद रखो । उसमें गुण्डापन जड़ से कभी नहीं होता । उस मनुष्य को अच्छी सङ्गत में रखो । अच्छी सङ्गति में पड़ते ही उसकी चोरी की प्रकृति जाती रहेगी । गुण्डेपन से घृणा करो, किन्तु गुण्डे से घृणा मत करो ।

३—स्मरण रखो कि भगवान नारायण स्वयं ही गुण्डे, चोर और वेश्या का रूप धारण करके इस संसार-रूपी नाट्य-

शाला में लीला करते हैं। यह सब उन्हीं के खेल हैं, उन्हीं की लीला है—'लोकवत्तु लीला कैवल्यम्।' ऐसा विचार आते ही सारी दृष्टि सहसा परिवर्त्तित हो जाती है और गुण्डे को भी देख कर हृदय से भक्ति का प्रादुर्भाव होता है। सब जगह आत्म-दृष्टि ही रखो। नारायण को ही सब जगह देखो। उनके ही अस्तित्व का अनुभव करो। गीता अध्याय ७ श्लोक १९ में भगवान् ने कहा है कि 'वासुदेवः सर्वमिति' अर्थात् वासुदेव ही सर्वत्र हैं।

४—एक वैज्ञानिक की दृष्टि में स्त्री विद्युत्-कणों की राशि मात्र है। कणाद ऋषि के वैशेषिक दर्शन के विद्वानों के लिए स्त्री परमाणुओं, द्वयणुओं, त्र्यणुओं का समूह मात्र है। वही स्त्री बाघ के लिए एक शिकार मात्र है। कामी पति के लिए वही स्त्री कामक्रीड़ा की एक वस्तु है। रोते हुए बच्चे के लिए वही स्त्री स्नेहमयी माता है जो दूध, मिठाई आदि दे कर प्रसन्न रखती है। एक सच्चे वैरागी के लिए मांस, अस्थि आदि का योग है और पूर्ण ज्ञानी के लिए वही स्त्री सच्चिदानन्द आत्मा के समान है; क्योंकि उसके लिए सभी कुछ ब्रह्म है।

मन का रूप बदल दो तभी तुम्हें इस पृथ्वी पर स्वर्ग दीख पड़ेगा। प्रिय मित्र! तुम्हारे उपनिषदों और वेदान्त-सूत्रों के पढ़ने से लाभ ही क्या यदि तुम्हारी दृष्टि में परिवर्त्तन न हुआ और तुम्हारी रसना खराब ही रही?

प्रथम दो साधन नौसिखियों के लिए और शेष सब योग के गम्भीर विद्यार्थियों के लिए हैं। उक्त चारों का उपयोग करने से बड़ा लाभ हो सकता है।

४—धारणा और ध्यान

१—'देशबन्धश्चित्तस्य धारणा' अर्थात् 'चित्त को वृत्ति-मात्र से किसी (बाहर अथवा अन्तर के) स्थान-विशेष में बाँधना धारणा' कहलाता है। बिना लक्ष्य स्थिर किये मन एकाग्र नहीं हो सकता। कार्य, रुचि तथा दृष्टि को किसी स्पष्ट वस्तु में स्थिर करने से ही धारणा में सफलता मिल सकती है।

२—इन्द्रियाँ ध्यान बँटा देती है और मन की शान्ति को चञ्चल कर देती हैं। यदि तुम्हारा मन ही अस्थिर है तो तुम्हारी उन्नति नहीं हो सकती। जब अभ्यास द्वारा मन की किरणें एक स्थान पर एकत्र हो जाती हैं, तभी मन एकाग्र होता है और तभी आन्तरिक आनन्द प्राप्त होता है। अतः निरन्तर उठने वाले विचारों को शान्त करो और चित्तवृत्तियों का शमन करो।

३—धैर्यवान्, वज्र-कठोर इच्छाशक्तिवान्, अधिक परिश्रमी और शीलवान् होने की आवश्यकता है। अपने अभ्यास में तुम्हें नियमित होना चाहिए। ऐसा न होने से सुस्ती और विरोधी शक्तियाँ तुम्हें लक्ष्य-भ्रष्ट कर देंगी। अच्छी तरह अभ्यास किया हुआ मन अन्य सब विचारों को शमन करके अन्दर या बाहर किसी भी लक्ष्य पर इच्छानुसार एकाग्र किया जा सकता है।

४—किसी-न-किसी वस्तु पर मन को एकाग्र करने की स्वाभाविक शक्ति सभी में रहती है; किन्तु आध्यात्मिक उन्नति के लिए बहुत उच्च कोटि की एकाग्रता की आवश्यकता है। जिस मनुष्य में मन को एकाग्र करने की शक्ति अधिक हो, वह थोड़े समय में ही अधिक-से-अधिक काम कर सकता है।

एकाग्रता करते समय मन के ऊपर बहुत जोर नहीं पड़ना चाहिए। एकाग्रता के अभ्यास में मन से कुश्ती लड़ने की आवश्यकता नहीं है।

५—जिस मनुष्य के मन में विषय-वासना तथा अन्य प्रकार के काल्पनिक विचार भरे रहते हैं ऐसा मनुष्य एक क्षण भी मन को एकाग्र नहीं कर सकता। ब्रह्मचर्य, प्राणायाम और व्यर्थ की आवश्यकताओं और कार्यों को घटाना, कामोत्तेजक विषयों का त्याग, एकान्त, मौन, इन्द्रियों पर नियन्त्रण, काम, लोभ, क्रोध का त्याग, कुसङ्गति का त्याग, समाचार-पत्रों तथा सिनेमा देखने की रोक आदि ऐसे काम हैं जिनसे एकाग्रता की शक्ति बढ़ती है।

६—सांसारिक कष्टों तथा यातनाओं से छुटकारा पाने के लिए धारणा ही एक उपाय है। धारणा का अभ्यास करने वाले का स्वास्थ्य अच्छा होगा और मानसिक सुख का उसे बाहुल्य होगा। उसकी अन्तःदृष्टि बहुत बढ़ जायेगी। वह जो भी काम करेगा उसमें सफलता तथा पूर्णता प्राप्त होगी। एकाग्रता से उमड़ते हुए उद्‌गार शुद्ध और शान्त होते हैं, विचार-धारा पुष्ट होती है और भाव स्पष्ट होते हैं। यमों और नियमों का पालन करके पहले मन को शुद्ध करना चाहिए। बिना चित्त-शुद्धिकरण के एकाग्रता से कोई लाभ नहीं।

७—किसी भी मन्त्र के जप और प्राणायाम से मन स्थिर होता है, विक्षेप नष्ट होते हैं और मन को एकाग्र करने की शक्ति बढ़ती है। सब प्रकार के सङ्कल्पों के मुक्त होने से ही मन एकाग्र हो सकता है। जिस वस्तु में तुम्हारा मन लगे या जिसमें तुम्हें सबसे अधिक रुचि हो उसी में अपने मन को

एकाग्र करो। आरम्भ में मन को स्थूल लक्ष्य पर एकाग्र करने का अभ्यास करना चाहिए, अभ्यास बढ़ने पर सूक्ष्म पदार्थों या भावों में मन सफलतापूर्वक एकाग्र किया जा सकता है। सफलता आने के लिए एकाग्रता का अभ्यास का नियमित होना बहुत आवश्यक है।

८—स्थूल आकार पर अभ्यास करने के लिए दीवार पर एक काला शून्य बना लो, या मोमबत्ती की ज्योति, प्रकाशमान नक्षत्र, चन्द्रमा, प्रणव, भगवान् शङ्कर, राम, कृष्ण, देवी या अपने इष्टदेव के चित्र को सामने रख कर और उस पर दृष्टि जमा कर मन को एकाग्र करने का अभ्यास करो।

९—सूक्ष्म आकार पर अभ्यास करने के लिए अपने इष्ट-देव का चित्र सामने रख कर अपनी आँखें बन्द कर लो। अपने इष्टदेव के आकार का ध्यान भ्रूमध्य में, मूलाधार, अनाहत, आज्ञा या और किसी चक्र में करो। अपने इष्टदेव के किसी दैवी गुण जैसे प्रेम, दया या अन्य अव्यक्त गुण का ध्यान करो।

श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

८ सितम्बर, सन् १८८७ को विश्वमञ्च पर प्रथम प्रभात देखा; परिवार के लोग उनको कुप्पूस्वामी कहते थे, जो कालान्तर में स्वामी शिवानन्द सरस्वती के नाम से दिग्विश्रुत हुए। जनता की आधिभौतिक चीत्कार ने उनको मलाया बुलाया और वैदिक गीतों की सनातन-परम्परा ने उनको हिमालय की ओर प्रेरित किया। १० साल तक विकट तपश्चर्या कर, आत्म-संयम और आत्मशुद्धि के वातावरण से अनवरत ध्यान में समाधिस्थ होते हुए उनको ज्ञानोज्ज्वल प्रज्ञा की अनुभूति हुई।

अपना ज्ञान जनता को देने और निष्काम कर्म-प्रणाली के आधार पर समाज और राष्ट्रों की मानवता का निर्माण करने को सन् १९३६ में उन्होंने 'दिव्य जीवन सङ्घ' को जन्म दिया और कालान्तर में सन् १९४८ में 'योग-वेदान्त-आरण्य-विद्यापीठ' सदृश अद्वितीय संस्था को उद्यत होते देखा। आज वे ग्रन्थकार के नाते ३०० गम्भीर ग्रन्थों के प्राणदाता हैं; जिनमें उनके जीवन की विशाल ज्ञान-ज्योति बिम्बित होती है और जो साधारण-से-साधारण मानव का भी पथ-प्रदर्शन करती है। अपने हृदय को मानव-समाज के विकास के लिए अक्षरों का स्वरूप दे कर, वे विशाल विश्व के तीर्थयात्री को मार्ग तो दिखा ही रहे हैं; अन्धकार में नवीन प्रभात तो ला ही रहे हैं; साथ-साथ वे प्रत्येक सत्यशील—परन्तु यातनातप्त साधक के चिर सहयात्री भी रहे हैं—जिनका शब्द उसे प्रोत्साहन और अभिप्रेरणा देता, जिनकी कृपाकटाक्षवीक्षणलहरी उसको दिव्य बना देती, स्वर्ण-मय कर देती है। आज तो वे विश्व के गुरुदेव हैं जिनकी ब्रह्माण्ड-व्यापिनी विजय-वैजयन्ती के नीचे सभी धर्म, सभी सम्प्रदाय और सभी वर्ण तथा सभी मनुष्य अपना-अपना आश्रय खोज रहे हैं—और निस्सन्देह भविष्य भी उनकी अवतार-कथा को घर-घर गायेगा—क्योंकि उन्होंने अपने दिग्विजयी व्यक्तित्व को परात्पर-जीवन में तन्मय कर दिया था। वे १४ जुलाई, १९६३ को महासमाधि में लीन हुए।